सितम्बर 2026

दादावाणी

Retail Price ₹ 20

बुद्धि

- आत्मा का इनडायरेक्ट प्रकाश
- रिलेटिव ज्ञान
- संसार के फायदा-नुकसान दिखाती है
- दूसरों की भूलें दिखाती है

प्रज्ञा

- आत्मा का डायरेक्ट प्रकाश
- रियल ज्ञान
- संसार में से छुड़वाकर आत्मा की ओर ले जाती है
- अपनी भूलें दिखाती है

यहाँ पर इस 'अक्रम मार्ग' में हम ज्ञान देते हैं, तब पहले प्रज्ञाशक्ति उत्पन्न हो जाती है और अज्ञाशक्ति विदा लेती है। यह प्रज्ञाशक्ति ही आपको मोक्ष में ले जाएगी।

टोरन्टो : सत्संग-ज्ञानविधि : ता. 17-18 जुलाई 2026

सत्संग

ज्ञानविधि

अटलान्टा : सत्संग-ज्ञानविधि : ता. 23-24 जुलाई 2026

सत्संग

ज्ञानविधि

इन्फोर्मल

जैक्सनविले : गुरुपूर्णिमा महोत्सव : ता. 28 जुलाई से 2 अगस्त 2026

स्वागत

सत्संग

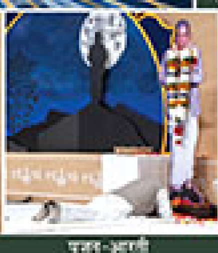
पूजन-आरती

दर्शन

वर्ष : 21 अंक : 11
अखंड क्रमांक : 251
सितम्बर 2026
पृष्ठ - 32

Editor : Dimple Mehta
© 2026
Dada Bhagwan Foundation
All Rights Reserved.
Printed & Published by
Dimple Mehta on behalf of
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

Owned by
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

Printed at
Amba Multiprint
Opp. H B Kapadiya New High School, At-Chhatral, Tal: Kalol, Dist. Gandhinagar - 382729

Published at
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

संपर्क सूत्र :
त्रिमंदिर, सीमंधर सिटी,
अहमदाबाद-कलोल हाइ-वे,
पो.ओ.: **अडालज,**
जि.: गांधीनगर-382421.
फोन: 9328661166-77
email: dadavani@dadabhagwan.org
www.dadabhagwan.org
दादावाणी संबंधी शिकायत के लिए:
+91 8155007500

सबस्क्रिप्शन (सदस्यता शुल्क)
3 साल
भारत : 700 रुपये
वार्षिक
भारत : 240 रुपये
भारत में D.D./M.O.
'महाविदेह फाउन्डेशन' के नाम से संपर्कसूत्र के पते पर भेजें।

दादावाणी

मोक्ष के लिए सचेत करे प्रज्ञाशक्ति

संपादकीय

ज्ञानी पुरुष की कृपा से अक्रम विज्ञान में भेदज्ञान प्राप्त होने के बाद, मात्र दो घंटे में ही 'मैं चंदू हूँ' की मूल रोंग बिलीफ को उड़ा दिया और 'मैं शुद्धात्मा हूँ' उसके प्रतीति-*लक्ष*-अनुभव दशा में बैठा दिया है। ज्ञान मिलने के बाद कई बार डिस्चार्ज कर्मों के दबाव में हम तन्मयाकार हो जाते हैं, तब महात्माओं को ऐसा लगता है कि सारा ज्ञान चला गया लेकिन वास्तव में ऐसा नहीं होता है। उस समय आत्मा का *लक्ष* हट जाता है लेकिन प्रतीति का तार निरंतर जोइन्ट रहता है, इसीलिए शुद्धात्मा की जागृति वापस आ जाती है। यह जागृति वापस कौन लाता है? 'प्रज्ञाशक्ति', यह आत्मज्ञान होने से खड़ी हुई शक्ति है, जो भूल होते ही तुरंत सचेत करती है।

पहले जो स्थूल में दिखाई देता है, वह इन्द्रिय ज्ञान से दिखाई देता है। फिर सूक्ष्म में मन-बुद्धि से जाना हुआ सब 'ज्ञेय' में जाता है। फिर शुद्धात्मा उसे प्रज्ञा से जानता है और फिर मूल आत्मा से। मन-बुद्धि-अहंकार के सभी पर्यायों को जानता है। चंदूलाल क्या कर रहे हैं, उसे देखते-जानते रहना वही शुद्ध उपयोग कहलाता है। यानी अपनी प्रकृति को निहारना, निरंतर जागृत रहना, किसी भी अन्य चीज़ में पड़ना ही नहीं, वही शुद्ध उपयोग है, जो प्रज्ञा का है। प्रज्ञा सचेत करे, तब 'हमें' उपयोग में रहना चाहिए, यही हमारा पुरुषार्थ है।

आत्मा की प्रज्ञाशक्ति रिलेटिव-रियल है, उसकी ही ज्ञानक्रिया है। मात्र ज्ञानक्रिया और दर्शनक्रिया के कर्ता यानी ज्ञाता-द्रष्टा। यह मन-बुद्धि के आधार पर ज्ञातापन नहीं है, आँख के आधार पर द्रष्टा नहीं है, चित्त के आधार पर भी नहीं है, इस प्रज्ञाशक्ति के आधार पर ज्ञाता-द्रष्टा है। दो वस्तुएँ हैं देखने वाली - प्रज्ञा और आत्मा। जब तक यह देह है, तब तक वह प्रज्ञा मानी जाती है और देह नहीं होती तब आत्मा माना जाता है। लेकिन आत्मा स्वयं नहीं देखता, केवलज्ञान होने तक प्रज्ञाशक्ति ज्ञाता-द्रष्टा रहती है और प्रज्ञा का काम पूरा हो जाता है, फिर आत्मा में एक हो जाती है, तब आत्मा खुद ज्ञायक के रूप में हो जाता है। प्रज्ञा का उपयोग है, तब तक देखना पड़ता है और आत्मा में तो पूरा जगत् भीतर झलकता है। इस देखने वाले को जो देखता है और जानने वाले को जानता है, वह मूल आत्मा, वह अंतिम देखने वाला है और वही हम हैं!

ज्ञानी की कृपा से आत्मा की प्रतिनिधि प्रज्ञाशक्ति का अंश अनुभव महात्माओं को ज्ञानविधि के बाद शुरू होता है, जो हमें आज्ञा का पालन करने के लिए लगातार सचेत करती है। लेकिन वहाँ यदि जागृति ने नहीं पकड़ा तो आवरण छा जाता है। वहाँ आज्ञा की समझ और पालन करने का निश्चय हो, तो सहज ही पालन हो सकता है। इस विज्ञान को समझकर, प्रज्ञा की चेतावनी के अनुसार निरंतर जागृति रखकर, पाँच आज्ञाओं के पालन के साथ प्रज्ञाशक्ति की हर एक ज्ञानक्रिया में बिना तन्मयाकार हुए, ज्ञान की क्षपक श्रेणियाँ चढ़कर, शुद्ध उपयोग में रहकर और ज्ञाता-द्रष्टा पद का अनुभव करके, केवलज्ञान दशा तक पहुँचें, यही हृदयपूर्वक अभ्यर्थना।

जय सच्चिदानंद

मोक्ष के लिए सचेत करे प्रज्ञाशक्ति

'दादावाणी' सामायिक में मुद्रित पाठ्य सामग्री मूलत: गुजराती 'दादावाणी' का हिन्दी रूपांतर है। कोष्ठक में दिए गए शब्द या तो अंग्रेज़ी शब्द का अर्थ हैं अथवा शब्द का तात्पर्य स्पष्ट करने हेतु वृद्धित किए गए वाक्यांश है। यहाँ पर 'आत्मा' शब्द को गुजराती और संस्कृत की तरह पुल्लिंग में प्रयोग किया गया है। जहाँ पर भी 'चंदूभाई' नाम का प्रयोग हुआ है, वहाँ पर पाठक खुद को समझें। 'दादावाणी' के इस अंक में अगर आप कोई बात न समझ पाएँ तो प्रत्यक्ष सत्संग में पधारकर समाधान प्राप्त करें। अनुवाद में कोई कमी नज़र आए तो हमें सूचित करने की कृपा करें, ताकि भविष्य में सुधार किया जा सकें। ऐसी क्षतियों के लिए हम आपके क्षमाप्रार्थी है।

प्रज्ञा से, शुद्धात्मा स्वरूप की जागृति

प्रश्नकर्ता : (ज्ञान लेने के बाद) जो ध्यान रहता है कि 'मेरा स्वरूप यह है और यह दूसरा है'। वह जो सतत ध्यान रहता है, वह कौन से भाग को है? वह कौन-सा भाग है?

दादाश्री : हम ज्ञान देते हैं तब प्रज्ञाशक्ति उत्पन्न हो जाती है। अत: यह जो शक्ति उत्पन्न हुई है, वह काम करती रहती है। मेरा स्वरूप शुद्धात्मा है, वह तो प्रज्ञा दिखाती है।

मैंने जो स्वरूप आपको दिया है उस स्वरूप में हो तो आप शुद्धात्मा स्वरूप हो।

यह आत्मा बिल्कुल अलग किया हुआ है, अनुभवपूर्वक। आपको इसके अनुभव समझ में भी आते हैं। क्योंकि वह भीतर बार-बार सचेत करता है न?

प्रश्नकर्ता : हाँ, हाँ, सचेत करता है।

दादाश्री : वह जो सचेत करता है, वही आत्मा है। क्या है?

प्रश्नकर्ता : सचेत करता है, वही आत्मा है।

दादाश्री : हाँ, वह प्रज्ञा है। लेकिन अभी वह प्रज्ञा ही आत्मा का मूल गुण है।

'हमने' आपको यह जो 'शुद्धात्मा' दिया है, वह 'फर्स्ट स्टेप' है। इससे आगे तो बहुत कुछ है। बाद में शुद्धात्मा का स्वरूप, उसके गुणों सहित प्रकट होता है!

सब से पहले तो शुद्धात्मा है और जो परमात्मा है, वह स्वयं ही रियल वस्तु है। वह स्टेशन अलग है और शुद्धात्मा स्टेशन अलग है। शुद्धात्मा तो वस्तु स्वरूप का सब से पहला '*परुं*' (उपनगर) है। फिर ऐसे कितने ही '*परां*' आएँगे, उसके बाद मुख्य स्टेशन आएगा। जैसे-जैसे अनुभव बढ़ते जाएँगे न, वैसे-वैसे आगे का '*परुं*' आता जाएगा, स्टेशन बदलता जाएगा। इस पहले स्टेशन पर आपको उतार दिया है, मोक्ष की बाउन्ड्री में। शुद्धात्मा वह पहला स्टेशन है, वहाँ से सेन्ट्रल स्टेशन की ओर जाएँगे, तब जाकर अंतिम स्टेशन आएगा।

प्रश्नकर्ता : यह भी ध्यान रहता है कि इन दोनों को जो भिन्न दिखाती है, उसमें मैं (यह) नहीं हूँ, मैं यह हूँ।

दादाश्री : वह तो ठीक है, प्रज्ञा दिखाती है।

जो यहाँ पर आ चुका है, वह जागृति में रहा करता है। जागृति नामक पद उत्पन्न हो जाता है। खुद, खुद के दोष देखने लगता है, प्रज्ञाशक्ति और जागृति, दोनों साथ में चलती हैं। प्रज्ञाशक्ति उसे समझाती रहती है और जागृति उसे पकड़ लेती है। प्रज्ञा सब कुछ दिखाती है, यह सब कुछ अलग-अलग दिखाती है।

भेदज्ञान के बाद सचेत करने वाली प्रज्ञाशक्ति

प्रश्नकर्ता : दादा ने भेदज्ञान दिया, भिन्न

बनाया। मैं (रिलेटिव) अलग, दरअसल (रियल) अलग। लेकिन चंदूभाई *पुद्गल* तो रहेगा न?

दादाश्री : रहेगा न, वह *पुद्गल* रहेगा। *पुद्गल* आपने अर्पण कर दिया है। अब यह जो *पुद्गल* है, वह व्यवस्थित के अधीन है। वह अपने व्यवस्थित के अधीन चलता रहेगा, आपको देखते रहना है। वह *पुद्गल* क्या कर रहा है, उसे देखते रहना है। इतना आपका पुरुषार्थ है।

प्रश्नकर्ता : देखते रहना है और कभी *पुद्गल* को सावधान करना चाहिए या नहीं?

दादाश्री : हाँ, सावधान करना चाहिए! लेकिन लापरवाह हो जाए तो सावधान करना है।

प्रश्नकर्ता : अरे, चलते-फिरते लापरवाही करता रहता है।

दादाश्री : नहीं, यह सब तो उदयकर्म करवाता है। लेकिन आप खुली आँखों से चलो और सावधानीपूर्वक चलो, बस इतना ही। उसका दुरुपयोग नहीं होना चाहिए। वर्ना वह देखने की जागृति उसकी मंद हो जाएगी। यदि 'देखे', तब तो उसे कुछ भी नहीं करना है। जो आज्ञा में रहता है, वह 'देख' ही रहा होता है चंदूभाई को, तो उसे कोई बात करने की ज़रूरत ही नहीं है लेकिन जब वह नहीं देख रहा हो, तब वहाँ सावधान करना पड़ता है।

प्रश्नकर्ता : जागृति की जो बात की न, जागृति में रहने की और सावधान रहने की। उसका हम यह विवरण कर रहे हैं।

दादाश्री : हाँ, ठीक है। जिससे ज्ञाता-द्रष्टा रहा जा सकता हो, उसे इस बात की ज़रूरत नहीं है और जिसे जागृति नहीं रहती हो, तो हम कहते हैं कि अब खुली आँखों से चलना, लापरवाह मत हो जाना। वर्ना व्यवस्थित तो आपको चलाएगा ही, लेकिन वह लापरवाही वाला नहीं होना चाहिए और जो ज्ञाता-द्रष्टा रहता है उसके लिए तो लापरवाही भी नहीं, कुछ भी नहीं रहा। वह आपके हिसाब में आता है। चंदूभाई क्या कर रहे हैं, उसके ज्ञाता-द्रष्टा आप।

प्रश्नकर्ता : यानी दादा, किसी भी प्रसंग में चंदूभाई को देखने के बजाय अगर मैं ही चंदूभाई हो जाऊँ तो क्या उसे लापरवाह हो गया ऐसा कहा जाएगा?

दादाश्री : हाँ, उसे लापरवाह हो गया ऐसा कहा जाएगा। किसी भी प्रसंग में यों चंदूभाई को देखने के बजाय आप चंदूभाई हो जाओ तो वह लापरवाही है। तब हम क्या कहते हैं कि वहाँ पर खुली आँखों से चलो।

प्रश्नकर्ता : हाँ, लेकिन कभी ऐसा होने के बाद आँख खुल जाती है। दादा सावधान कर देते हैं कि, यह हो गया, अब इसे देखो।

दादाश्री : हाँ। इसलिए वहाँ हमने कहा है, 'खुली आँखों से खड़े रहो।' हमें वह जागृति रखनी है। ऐसा हो जाता है न? दादा को कहने नहीं आना पड़ता न? विज्ञान सारा काम कर रहा है। आपको किसी तरह की परेशानी नहीं है। सहज रूप से काम हो रहा है। सावधान भी करता है, लोग कहते हैं कि आत्मा का अनुभव नहीं होता। अरे भाई, क्या अंदर सावधान नहीं करता पूरे दिन? हाँ। तो भाई, वही आत्मा है और कौन आएगा? क्या कोई परदेशी है, जो अंदर घुस गया है?

तन्मयाकार न होने दे, वह प्रज्ञाशक्ति

प्रश्नकर्ता : हम एकाकार न हो जाएँ, उसका ध्यान तो प्रज्ञा रखती है न?

दादाश्री : हाँ, प्रज्ञा अलग ही रखती है,

एकाकार न हो जाए उसका ही ज्ञान आपको दिया है, प्रज्ञा आपको सचेत करती है। भूल हो जाती है उस समय आपको सचेत करती है, बस।

प्रश्नकर्ता : सचेत होना है, ऐसा वह किस तरह से कहती है?

दादाश्री : जागृत रहना है। एकाकार न हो जाना 'उसके' साथ।

प्रश्नकर्ता : हाँ, विशेष भाव के साथ एकाकार न होना, तो यह आत्मा की क्रिया नहीं हुई, दादा?

दादाश्री : आत्मा की क्रिया मानी ही नहीं जाती किसी में भी।

प्रश्नकर्ता : सचेत करने की क्रिया आत्मा की है या नहीं? प्रज्ञा की नहीं है? आत्मा की या प्रज्ञा की?

दादाश्री : वह तो प्रज्ञा की है। सब एक ही है न, वास्तव में इसमें और कुछ है ही नहीं। वहाँ सचेत रहना है, ऐसा नहीं कहते? उपयोग रखो। उपयोग अर्थात् सचेत रहना है।

प्रश्नकर्ता : यह जो तन्मयाकार हो जाते हैं, वह?

दादाश्री : हाँ, वही अज्ञाशक्ति है और जो तन्मयाकार नहीं होने दे, वह प्रज्ञाशक्ति है।

प्रश्नकर्ता : शुद्धात्मा होने के बाद अपने हाथ में मात्र देखना ही रहा न?

दादाश्री : देखने और समझने की वह सारी शक्ति प्रज्ञा की है। शुद्धात्मा की जो शक्ति उत्पन्न होती है, वह प्रज्ञाशक्ति है और अहंकार की जो शक्ति है, वह अज्ञाशक्ति है। वह बुद्धि के रूप में होती है। हर जगह फायदा और नुकसान, दोनों ही दिखाती है। बस में बैठा हो तो वहाँ भी फायदा-नुकसान दिखाती है। खाना खाने गया हो तो वहाँ भी फायदा-नुकसान दिखाती है।

प्रश्नकर्ता : आप जो समझाते हैं, वह किसे पहुँचता है, देह को या आत्मा को?

दादाश्री : आत्मा को ही न! पर वह कौन सा आत्मा? जो शुद्धात्मा है, वह नहीं, प्रज्ञा नामक जो शक्ति है, उसके साथ सत्संग चलता रहता है। देह को भी नहीं, देह और आत्मा दोनों के बीच की जो शक्ति है, उसे पहुँचता है। प्रज्ञाशक्ति ही समझती है यह। यहाँ जो समझाते हैं, उसे जो कैच-अप (ग्रहण) करती है, वह प्रज्ञाशक्ति है।

भीतर सचेत करे, वही आत्मानुभव

सचेत करने की वह तो स्वाभाविक क्रिया है। पूरे दिन सचेत करती है, वही प्रज्ञा है। अलग ही करती रहती है। इतना सारा अनुभव, पूरे दिन का अनुभव हमें अलग ही रखता है, नहीं?

प्रश्नकर्ता : ठीक है।

दादाश्री : एक नहीं होने देती।

प्रश्नकर्ता : जब से प्रज्ञा शुरू हुई है, तभी से आत्मा के अनुभव की शुरुआत हो गई न?

दादाश्री : आत्मा का अनुभव हो ही जाता है। तभी वह सचेत करती है न, वर्ना 'मैं आत्मा हूँ' यह *लक्ष* (जागृति) में ही नहीं रहता। यह तो निरंतर *लक्ष* में रहता है और जागृति भी निरंतर रहती है। वह लाइट जलती ही रहती है, लेकिन आप दूसरी जगह पर चले जाओ तो उसमें वह क्या करे? और अगर आज्ञा का पालन करे तो निरंतर लाइट ही रहेगी। यों विज्ञान को पूरी तरह से समझ ले तो काम का है! अंदर सचेत करती है क्या आपको? ज़रा भी इधर-उधर हुए तो सचेत करती है।

प्रश्नकर्ता : हाँ, तुरंत ही सचेत करती है अंदर। यह हमारा अनुभव है।

दादाश्री : अब यों जो सचेत करती है, उसमें आपको ऐसा लगता है न कि आपका कोई कर्तव्य नहीं है फिर भी ऐसा चलता रहता है? हर बार भूल होने पर सचेत करती है न? जहाँ-जहाँ दोष होता है वहाँ पर सचेत करती है न? वह क्या है? प्रज्ञा। दोष होते ही तुरंत यों सचेत करती है। अतः यह जो विज्ञान है, वह चेतन विज्ञान है और जहाँ शास्त्रज्ञान होता है, वहाँ हमें करना पड़ता है। शास्त्र में लिखी हुई चीज़ हमें करनी पड़ती है जबकि इसमें आपको करना नहीं पड़ता। अपने आप होता है न!

प्रश्नकर्ता : अब, यह प्रज्ञा बार-बार सचेत करती रहती है, वह अनुभव तो होता ही है लेकिन उसके साथ अपना खुद का पुरुषार्थ भी ज़रूरी है न?

दादाश्री : कैसा पुरुषार्थ?

प्रश्नकर्ता : इस प्रज्ञा की मदद से पता चलता है कि यह गलत हो गया है, तो फिर वहाँ पर प्रतिक्रमण करके उसे साफ कर देना चाहिए न?

दादाश्री : प्रतिक्रमण का पुरुषार्थ तो होता ही है। प्रतिक्रमण हो ही जाता है। जिससे अतिक्रमण होता है उससे प्रतिक्रमण का पुरुषार्थ होता ही रहता है। पुरुष पुरुषार्थ धर्म का पालन करता ही रहता है।

वह प्रतिक्रमण सारा हो ही जाता है। सहज स्वभाव से होता रहता है और अगर नहीं हो रहा हो तो उसे करना चाहिए। उसमें करना कुछ भी नहीं है, सिर्फ भाव ही करना है। अजागृति रहती हो, तो अब वहाँ जागृत रहना है।

प्रज्ञा से उल्टा चलाए कौन?

प्रश्नकर्ता : प्रज्ञा सचेत करती है, इसके बावजूद भी उस अनुसार नहीं होता, तो ऐसे उल्टा कौन करवाता है?

दादाश्री : उस अनुसार नहीं होता है तो आपने ही ऐसे अंतराय डाले हुए हैं। इसलिए आपकी इच्छा हो फिर भी वैसा नहीं हो पाता।

प्रश्नकर्ता : ये सब अंतराय डाले हुए हैं, तो इसका उपाय क्या है?

दादाश्री : जो हो गया, वह अंतराय का फल आ गया है। वे अंतराय तो भोगने ही पड़ेंगे लेकिन नए नहीं डालने चाहिए।

जागृति-उपयोग, वे प्रज्ञा के

आत्मा, आत्मा के स्वभाव में ही रहता है। वह स्वभाव नहीं बदलता। अज्ञा से जगत् उत्पन्न हुआ है और प्रज्ञा से मोक्ष होता है। अज्ञा से यानी बुद्धि से, प्रज्ञा से यानी ज्ञान से। अतः जो अज्ञा है, वह संसार से बाहर नहीं निकलने देती। प्रज्ञा संसार में टिकने नहीं देती, मोक्ष में ले जाती है। यानी सारी चेतावनियाँ प्रज्ञा की हैं, सचेत करना वगैरह।

प्रश्नकर्ता : उपयोग वह किसका गुण है?

दादाश्री : अब यह शुद्ध उपयोग प्रज्ञा का है और शुभाशुभ उपयोग अहंकार का है। वह पराधीन है, स्वाधीन नहीं है और जो प्रज्ञा का है वह स्वाधीन है। यह पुरुषार्थमय है, वह कर्माधीन है।

प्रश्नकर्ता : दादा, क्या उपयोग को आत्मा का लक्षण माना जा सकता है?

दादाश्री : नहीं। यह उपयोग, इसका योग

किसमें है? स्वाभाविक योग में है या विशेष भाव के योग में है? विशेष भाव का योग भी उपयोग कहलाता है। उपयोग अर्थात् जागृतिपूर्वक।

प्रश्नकर्ता : जागृति के संदर्भ में उपयोग किसे कहेंगे?

दादाश्री : जागृति का उपयोग संसार की ओर करना, वह दुरुपयोग कहलाता है और इस ओर, आत्मा के प्रति, धर्म के प्रति उपयोग करें तो वह सदुपयोग कहलाता है, शुभ उपयोग कहलाता है और आत्म जागृति में आने के बाद शुद्ध उपयोग कहलाता है।

प्रश्नकर्ता : उपयोग मूल आत्मा का ही होता है न?

दादाश्री : नहीं, आत्मा का उपयोग नहीं होता। आत्मा का उपयोग हो तब तो वह बन जाएगा भंडारी, सर्विसमेन बन जाएगा। यह तो, लोग ऐसा सब सिखाते हैं, लेकिन आत्मा वैसा नहीं है। बाहर ये जो प्रचलित वाक्य हैं, उनमें एक भी जगह आत्मा नहीं है। यह आपको मान लेना है। हर कोई अपने स्टैन्डर्ड के अनुसार बोलता है, लेकिन स्टैन्डर्डाइज़्ड है। आत्मा को उपयोग भी नहीं है और कुछ भी नहीं है।

प्रश्नकर्ता : तो उपयोग किसका है?

दादाश्री : उपयोग सारा अहंकारी का (व्यवहार आत्मा का) है, आत्मा प्राप्त करने से पहले उपयोग उस तरफ (भौतिक की तरफ) जाता है, वह पर-उपयोग कहलाता है और आत्मा की दृष्टि मिलने के बाद उपयोग आत्मा की तरफ जाता है, उसे स्व-उपयोग (प्रज्ञा का) कहते हैं, बस। उपयोग अर्थात् जागृति, उसका किस तरफ इस्तेमाल हो रहा है, वह देखना है।

फर्क, उपयोग और जागृति में

प्रश्नकर्ता : आत्मा का उपयोग और आत्मा की जागृति, इन दोनों में क्या डिफरेन्स (अंतर) है?

दादाश्री : डिफरेन्स तो यह लाइट जल रही हो, आप कोई काम नहीं करो और सोते रहो, तो लाइट व्यर्थ जाएगी न? और यह जो लाइट का प्रकाश है, वह जागृति ही है लेकिन उसमें पढ़ें तो उपयोग किया ऐसा कहा जाएगा।

प्रश्नकर्ता : यानी जागृति को एक जगह पर केंद्रित करना, उसे ही उपयोग कहते हैं?

दादाश्री : जागृति तो होती ही है ज्ञान देते हैं इसलिए। उसमें काम कर लेना है। जागृति तो यों ही चली जाती है, यदि उपयोग करेंगे तो काम में आएगी। इलेक्ट्रिसिटी है ही अंदर, उसी को जागृति कहते हैं लेकिन बटन दबाएँ तो प्रकाश होगा न! यह बटन दबाते हैं, वह उपयोग है, वर्ना गर्मी में यों हाथ से पंखा घुमाते रहते हैं। अरे, बटन दबा न! उपयोग कर न!

ज्ञान का अनुभव प्रज्ञा को

प्रश्नकर्ता : एक ऐसी बात निकली थी कि अज्ञान का जितना मज़बूत अनुभव हुआ है, उतना मज़बूत अनुभव ज्ञान का होना चाहिए।

दादाश्री : ज्ञान का गाढ़ अनुभव होने के बाद फिर उपयोग नहीं रखना पड़ता है, अपने आप ही रहता है। जब तक गाढ़ अनुभव नहीं हुआ हो तब तक उपयोग रखना पड़ता है। उपयोग, वह पुरुषार्थ कहलाता है और वह पुरुषार्थ पूर्ण कब होता है? जब गाढ़ हो जाता है तब पुरुषार्थ पूर्ण हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : तो जब अज्ञानता का अनुभव होता है, तब उपयोग रखने की ज़रूरत है क्या?

दादाश्री : उपयोग तभी तो रखना पड़ता है न!

प्रश्नकर्ता : ताकि उस अनुभव के असर में खुद न आ जाए।

दादाश्री : वापस खुद का उपयोग रखेगा, तो अज्ञानता के अनुभव के असर में नहीं आएगा। वह टाइम खुद का कहलाता है, समयसार कहलाता है। वह समयसार रहित नहीं होता, वर्ना समयसार नहीं कहलाएगा, परसमय कहलाएगा। आत्मा का जितना उपयोग रहा, उतना सब समयसार। जो समय स्व में गया, वह सारा समयसार और जो समय पर में गया, वह सारा परसमय।

प्रश्नकर्ता : अज्ञान का अनुभव किसे होता है और ज्ञान का अनुभव किसे होता है?

दादाश्री : अज्ञान का अनुभव बुद्धि और अहंकार को होता है और ज्ञान का अनुभव प्रज्ञा को होता है।

प्रश्नकर्ता : 'मैं शुद्धात्मा हूँ', ऐसा जो बोलता है, उसे भी प्रज्ञा देखती है?

दादाश्री : बोलता है टेपरिकॉर्डर, लेकिन भाव प्रज्ञा का है।

प्रश्नकर्ता : तो वह सहज क्रिया प्रज्ञा की हुई?

दादाश्री : प्रज्ञा की सभी क्रियाएँ सहज ही होती हैं, स्वाभाविक ही होती हैं। प्रज्ञा तो काम करती ही रहती है अपने आप, लेकिन 'आपको' उस उपयोग में रहना चाहिए। उपयोग तो 'आपको' रखना ही चाहिए, उपयोग नहीं रखें तो सारे कार्य बिगड़ते रहते हैं। तो उपयोग यानी क्या? तब कहते हैं, 'जो हो रहा है उसे देखते रहो, वह शुद्ध उपयोग है।' अब, बिना सावधानी के हो वह उपयोग में है ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : सावधानीपूर्वक करने की जो बात है वह बल आत्मा से आता है, कहाँ से आता है?

दादाश्री : जागृति है वह तो बस। और कुछ नहीं, पर जागृति नहीं रखेंगे और मंद रहेंगे तो काम बिगड़ जाता है। इसलिए ऐसे जागृत रहेंगे तो काम चलेगा। उपयोग में रहेंगे तो यह काम चलेगा।

यथार्थ शुद्ध उपयोग

शुद्ध उपयोग यानी क्या कि खुद अपने आपको शुद्ध जानकर और तू शुद्ध देख। खुद अपने आपको 'मैं शुद्ध हूँ' ऐसी प्रतीति, *लक्ष* और अनुभव से देख और दूसरों को उसी रूप से देख, उसे शुद्ध उपयोग कहते हैं।

अब कभी कोई व्यक्ति इतनी बड़ी फूलों की माला पहना गया, तो उस समय आपको उसके प्रति भाव आया कि बहुत अच्छा व्यक्ति था। और फिर एक व्यक्ति आपसे वह माला लेकर तोड़कर फेंक दे तो उसके प्रति अभाव हो जाए, वह शुद्ध उपयोग नहीं कहा जाएगा। एक पहनाए, एक तोड़ दे। एक सम्मान करे, एक गालियाँ दे लेकिन उसमें कोई फर्क नहीं पड़ना चाहिए। जब तक फर्क पड़ता है तब तक जितना होना चाहिए उतना शुद्ध उपयोग नहीं हुआ है।

प्रश्नकर्ता : फर्क पड़ता ही है, दादा। असर हो जाता है।

दादाश्री : वह फर्क पड़ता है तो समझना कि अभी उतना कचरा पड़ा हुआ है। शुद्ध उपयोग अर्थात् आत्मा को नहीं भूलें। यानी जितने समय तक राग-द्वेष नहीं होते, उसे शुद्ध उपयोग कहते हैं।

प्रश्नकर्ता : यहाँ सत्संग में बैठे हुए हों

और हम सभी में शुद्धात्मा देखें तो क्या वह शुद्ध उपयोग कहा जाएगा?

दादाश्री : हाँ, उन सभी में शुद्धात्मा देखें लेकिन अगर कोई आकर थप्पड़ लगाए और उसमें शुद्धात्मा नहीं दिखाई दे तो समझना कि वह शुद्ध उपयोग नहीं है। पुलिस वाला जेल में ले जा रहा हो, उस समय पुलिस वाले में शुद्ध आत्मा ही दिखाई दे, तब सही है! पत्नी जब गालियाँ सुना रही हो, उस समय पत्नी का आत्मा शुद्ध ही दिखाई दे, तब सही है। ऐसा आत्मा हमने दिया है आपको जानने की ज़रूरत है। मैंने कैसा आत्मा दिया है? *निव्वल* (विशुद्ध), शुद्ध आत्मा दिया है। वह वापस कभी भी जैसा था, वैसा नहीं बनेगा। यानी आपकी तैयारी होनी चाहिए।

शुद्ध उपयोगी को जगत् निर्दोष

प्रश्नकर्ता : शुद्ध उपयोग कैसे रखना है?

दादाश्री : चंदूभाई क्या कर रहे हैं, उसे देखते रहना और जानते रहना, वह शुद्ध उपयोग कहलाता है। यानी खुद की प्रकृति को देखना, उसे शुद्ध उपयोग कहते हैं। शुद्ध उपयोग यानी निरंतर जागृत। अन्य किसी में पड़ता ही नहीं। खाते ज़रूर हैं लेकिन खाना खाने में नहीं पड़ते, किसी में नहीं पड़ते। सभी को इतना ज्ञान नहीं रह सकता लेकिन कुछ अंश तक का रहे न, तो भी बहुत हो गया। 'चंदूभाई क्या करते हैं', आप उसे देखो न, तो भी बहुत हो गया। चंदूभाई खाने में लगे हुए हों और उसे आप देखो, तब भी आप बहुत आगे बढ़ गए। अपने यहाँ जिन्होंने ज्ञान लिया है, वे सभी शुद्ध उपयोग रखते हैं। और शुद्ध उपयोग क्या है? यह 'चंदूभाई क्या कर रहे हैं? चंदूभाई का मन क्या कर रहा है'? वह सब विस्तारपूर्वक जानना।

जैसे सिनेमा में बैठा हुआ व्यक्ति फिल्म और खुद, दोनों को विस्तार से जानता है या नहीं जानता? इतना विस्तारपूर्वक वह जाने, तब वह शुद्ध उपयोग कहा जाता है। द्रष्टा और दृश्य इतने दूर होते हैं कि तब वह शुद्ध उपयोग कहा जाता है।

अब, उसमें शुद्ध उपयोग की शुरुआत कैसे होती है? यदि कोई आपको थप्पड़ मार रहा हो, उस समय आपको ऐसा दिखाई दे कि 'ओहोहो! चंदूभाई जैसे अच्छे व्यक्ति को भी यह थप्पड़ मार रहा है!' आपको दिखाई दे, फिर भी आप ऐसा मानें कि, 'भुगतने वाला चंदूभाई है इसलिए भूल तो उसकी खुद की ही है न?' यह सब आपको एक्ज़ेक्ट दिखाई दे और वह सामने वाला शुद्ध दिखाई दे, वह शुद्ध ही है। जैसे आप शुद्ध हो, वैसे वह भी शुद्ध ही है। भले ही उसने ज्ञान नहीं लिया लेकिन वह शुद्ध ही है। उसमें अशुद्धता नहीं दिखाई देनी चाहिए, बस इतना ही। उसे कहते हैं, शुद्ध उपयोग। उसे यदि अशुद्ध मानोगे तो आपका उपयोग बिगड़ जाएगा। तब कहता है कि 'वह आत्मा तो शुद्ध ही है लेकिन बाहरी भाग? बाहरी भाग तो उसका खराब ही है न?' तब कहेंगे, 'नहीं, आपके लिए वह खराब नहीं है। उसके लिए खराब है'। 'तब साहब, इसमें कुछ न्याय बताइए। क्या हमारे लिए खराब नहीं है? थप्पड़ मारता है, और फिर खुश होकर मारता है।' तब कहे, 'ऐसा उसके खुद के लिए खराब है लेकिन आपके लिए वह खराब नहीं है'। क्योंकि आपको समझ लेना चाहिए कि 'यह कर्म के उदयाधीन मार रहा है। किसका कर्म? जिसे थप्पड़ लगती है, उसका कर्म। तब फिर उसका क्या दोष?' बताइए! कोई तरीका तो होगा न? इस तरह निर्दोष देखा जाए, तब वह शुद्ध उपयोग है। जब आपको गालियाँ दे रहा हो, उस समय निर्दोष दिखाई दे, तब वह शुद्ध उपयोग (कहा जाएगा)।

शुद्ध उपयोग रहे तो दखल ही नहीं रहेगी किसी तरह की। ज़रा सी भी दखल नहीं, उसमें सब समा जाता है। हमारे दूसरे वाक्य शुद्ध उपयोग लाने के लिए हैं। एक-एक वाक्य दिए गए हैं, सारे अलग-अलग। समझेंगे तो घोटाला नहीं करेंगे इसलिए कहा कि जगत् निर्दोष ही है, उसमें दोषित क्या देखना? बिना वजह औरों के दोष देखते हो, तभी न!

हमेशा दोष कब दिखाई देते हैं? आप में दोष खड़ा होते ही तुरंत दूसरों के दोष दिखाई देंगे। नियम ही है ऐसा, वर्ना दोष नहीं दिखाई देंगे। उससे फिर यह सारा उपयोग बिगड़ जाता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादा, दोनों चीज़ें एक साथ चलती हैं। सामने वाले के दोष भी दिखाई देते हैं और ज्ञान भी कहता है कि, उसका कोई दोष नहीं है।

दादाश्री : दोष तो बाह्य दृष्टि से दिखाई देते हैं और अंतर दृष्टि से निर्दोष दिखाई देता है। वह जो निर्दोष दिखाई देता है, वह अपना सम्यक् दर्शन है। अब यदि (दृष्टि उसे) निर्दोष नहीं दिखाए तो ऐसा कहा जाएगा कि वह व्यक्ति कमज़ोर पड़ गया। उसमें शुद्ध उपयोग नहीं है। क्योंकि खुद शुद्ध, खुद अपने आप में (शुद्ध) रहना और शुद्ध देखना, वही शुद्ध उपयोग है। निर्दोष देखना, उसी को शुद्ध उपयोग कहते हैं।

प्रश्नकर्ता : यानी जब खुद अकेला हो तब अपने आपको भी शुद्ध देखे, वह शुद्ध उपयोग है।

दादाश्री : शुद्ध देखता है, वह तो मानता ही है लेकिन खुद के अंदर का सारा जो सूक्ष्म है, उन ज्ञेयों को देखना है। उपयोग को शुद्ध करना है। शुद्ध उपयोग यानी यों बाहर देखने जाएँ तो शुद्धात्मा दिखाई दे। खुद का स्वरूप शुद्ध है और अन्य भी शुद्ध दिखाई दें, वह शुद्ध उपयोग और हमारी आज्ञा में रहे तो वह संपूर्ण शुद्ध उपयोग।

उपयोग में रहने की बाड़, आज्ञा

प्रश्नकर्ता : अपने महात्मा जैसे-जैसे ज्ञान का उपयोग करते जाते हैं, वैसे-वैसे उनकी ज्ञान की अवस्था बढ़ती जाती है, या फिर ज्ञान प्राप्ति के बाद उपयोग नहीं रखने पर भी आपकी कृपा से ज्ञान में पूर्णता आती ही है?

दादाश्री : उपयोग में ही रहना चाहिए। उपयोग संसार में रहे और अपना ज्ञान बढ़ता रहे, ऐसा नहीं हो सकता। संसार *निकाली* चीज़ है। *निकाली* चीज़ में उपयोग नहीं रहना चाहिए। जो कुछ भी हो, उसे देखते रहना है।

प्रश्नकर्ता : दादा, तो यथार्थ उपयोग कैसे रखना चाहिए, वह समझाइए?

दादाश्री : पाँच आज्ञा ही यथार्थ उपयोग है। सभी में आप शुद्धात्मा देखो, 'यह फाइल है' ऐसा देखोगे, तब भी कहा जाएगा कि शुद्धात्मा देखा या फिर शुद्धात्मा देखोगे तब भी फाइल हो जाएगी। यानी कि ये पाँच आज्ञाएँ ही उपयोग है। इससे फिर अंदर ज्ञान का उपयोग और भी ज़्यादा बढ़ता जाएगा। वास्तविक उपयोग बढ़ता जाएगा, यह बाड़ है उपयोग में रहने के लिए। उपयोग रखे बिना ज्ञान कभी भी बढ़ ही नहीं सकता। उपयोग यानी... अब तक उपयोग संसार में था, आत्मा संसार में बरतता था, जबकि वह आत्मा अब आत्मा में बरतता है, वही उपयोग है। आत्मा, आत्मा में कैसे बरतेगा? तब कहते हैं, बच्चा दूध गिरा रहा हो तो उसे देखता रहे। वहाँ जाकर रोकता ज़रूर है। तब आपको चंदूभाई से कहना

है कि बेटे को रोको लेकिन कषाय मत करना। इमोशनल नहीं होना है। आपको 'इमोशनल' करवाती है, *अजंपा* (बेचैनी) करे, वह बुद्धि है। प्रज्ञा में *अजंपा* नहीं होता।

शुद्ध उपयोग रहना चाहिए, बस! जितना हो सके उतना, एज़ फार एज़ पॉसिबल। उसके लिए फिर रात को चिंता नहीं करनी है, सो जाना है आराम से। मेरा कहना ऐसा है कि रातों को जागने की कोई ज़रूरत नहीं है लेकिन हम पुरुष बने हैं इसलिए ज़रा ज़्यादा पुरुषार्थ रखना है। ऐसा निश्चय-निर्णय होना चाहिए कि, 'मुझे अब शुद्ध उपयोग रखना ही है'। फिर अगर नहीं रह पाए तो वह सब *निकाली* है। और हमें कोई हड़बड़ाहट करने की ज़रूरत नहीं है, बदहवास नहीं होना है, मोक्ष सामने से आएगा। इन आज्ञाओं का पालन करना है, और कुछ हमें मोक्ष की चिंता करने की ज़रूरत ही नहीं है। आज्ञा की यह टिकट ऐसी है कि वहीं पर ले जाएगी।

प्रश्नकर्ता : आज्ञा समझनी हैं, दादा।

दादाश्री : हाँ, वह सब समझना तो है ही न! समझने की ही तो ज़रूरत है। समझे ही हैं न! कई लोग समझ गए हैं लेकिन कुछ लोगों में कमी है समझने की।

फर्क, शुद्ध उपयोग और ज्ञाता-द्रष्टा में

प्रश्नकर्ता : शुद्ध उपयोग, देखना व जानना और ज्ञाता-द्रष्टा, इन तीनों में क्या अंतर है?

दादाश्री : वे तीनों एक ही हैं लेकिन शुद्ध उपयोग लंबा-चौड़ा होता है। शुद्ध उपयोग यानी आप किसी से कहो कि, 'तूने मुझे गाली क्यों दी?' तो वह आपका शुद्ध उपयोग नहीं है। और आपके *लक्ष* में या ध्यान में रहे कि 'नगीन भाई ने चंदूभाई को गाली दी', ऐसा आपको रहे तो वह शुद्ध उपयोग कहा जाएगा। यदि ऐसा कहें कि 'इन नगीन भाई ने मुझे गाली दी' तो वह शुद्ध उपयोग नहीं कहा जाएगा। कोई भी दोषित नहीं दिखाई दे तो उसे कहेंगे शुद्ध उपयोग। कोई भी दोषित नहीं है, जगत् निर्दोष ही है।

प्रश्नकर्ता : अब ऐसा जब होता है उस समय 'देखना व जानना', उसका अर्थ क्या है?

दादाश्री : राग-द्वेष नहीं करना, वही 'देखना-जानना' कहलाता है।

प्रश्नकर्ता : यानी 'देखना व जानना', वह उपयोग से एक स्टेप आगे है?

दादाश्री : नहीं। सब से उत्तम बात शुद्ध उपयोग की है। शुद्ध उपयोग सब से अंतिम स्टेशन है और उसका फल है, 'देखना व जानना'। शुद्ध देखता है व जानता है, उसी को शुद्ध उपयोग कहते हैं। अन्य बहुत प्रकार से शुद्ध उपयोग कहा जाता है। सामने वाला भी शुद्ध ही है, ऐसा लगना चाहिए। क्या आपको ऐसा लगता है?

प्रज्ञा का शुद्ध उपयोग

प्रश्नकर्ता : चंदूभाई जब तक जीवित हैं, तब तक उनका उपयोग तो व्यवहार में ही रहेगा। तो फिर आप जो शुद्ध उपयोग में रहने की बात करते हैं, वह कैसे होता है?

दादाश्री : वह तो प्रज्ञा द्वारा होगा न! यानी खुद शुद्ध है और सामने वाले में भी शुद्ध है! प्रज्ञा और अज्ञा, इन दोनों में फर्क है न? उसमें अज्ञा काम करती है और यह, प्रज्ञा काम करती है, उतना ही फर्क है!

प्रश्नकर्ता : ये चंदूभाई व्यवहार में हैं..

दादाश्री : उसमें अज्ञा काम करती रहती है। अज्ञा और प्रज्ञा। अज्ञा यानी बुद्धि और प्रज्ञा

यानी ज्ञान। प्रज्ञा जो है, वह ऐसा समझती है कि 'मैं शुद्ध हूँ' और कोई गाली दे रहा है, फिर भी उसके आत्मा को 'शुद्ध है' ऐसा समझती है। शुद्ध जानना है। उसमें फर्क नहीं आना चाहिए, वह है शुद्ध उपयोग। शुद्ध देखना। गाय-भैंस सभी में आत्मा को शुद्ध देखना है कि वे शुद्धात्मा हैं। कोई गालियाँ सुनाए, जेब काटे फिर भी शुद्ध आत्मा, उसकी शुद्धता को देखना है।

प्रश्नकर्ता : तो क्या उसे चंदूभाई का शुद्ध उपयोग कहा जाएगा?

दादाश्री : शुद्ध उपयोग चंदूभाई का है ही नहीं, शुद्ध उपयोग प्रज्ञा का होता है। चंदूभाई का उपयोग वह तो अशुद्ध उपयोग है, शुभाशुभ उपयोग। अच्छा देखता है और बुरा देखता है, वह भी *निकाली* भाग है, ग्रहणीय नहीं है। वह भी *निकाली* यानी निर्मूल हो जाएगा, अन्य कुछ नहीं उगेगा। चंदूभाई क्या कर रहे हैं, उसे जाने तो भी बहुत हो गया, वह खुद का शुद्ध उपयोग है। चंदूभाई इस ओर देखें और यदि उसे हम जानें कि, 'ओहो, चंदूभाई ऐसा देख रहे हैं' तो वह खुद का शुद्ध उपयोग है!

व्यवहार और उपयोग, दोनों साथ ही

प्रश्नकर्ता : रोज़मर्रा के व्यवहार का आयोजन करते समय क्या शुद्ध उपयोग में रहा जा सकता है?

दादाश्री : 'क्या व्यवहार करते हुए शुद्ध उपयोग में रहना संभव है', ऐसा पूछने वाला या तो शुद्ध उपयोग को नहीं जानता या फिर व्यवहार को नहीं जानता।

प्रश्नकर्ता : ज़रा इसमें डिफरेन्स समझाइए।

दादाश्री : हर एक व्यवहार में क्रिया और ज्ञाता, दोनों साथ में ही रहते हैं। दोनों का व्यवहार साथ-साथ चलता रहता है।

प्रश्नकर्ता : क्या वे दोनों व्यवहार में साथ-साथ ही होते हैं?

दादाश्री : हैं ही, पूरा साथ ही है लेकिन इस बात की उसे जागृति नहीं है।

प्रश्नकर्ता : तो दादा, जो व्यवहार करता है, जो क्रिया करता है, वह और ज्ञाता, जो कि देखता है, वे दोनों अलग ही हैं लेकिन साथ ही हैं।

दादाश्री : व्यवहार को क्रिया कहा जाता है और इस उपयोग को ज्ञान कहा जाता है। एक ओर देखते हो और दूसरी ओर क्रिया होती है। दोनों साथ ही चलते हैं। कभी भी अलग-अलग नहीं चलते। आत्मा हर समय हाज़िर ही रहता है। आत्मा गैरहाज़िर नहीं रहता। क्रिया गैरहाज़िर हो सकती है।

प्रश्नकर्ता : प्रत्येक क्रिया करते समय जागृति रखना, वही मुख्य चीज़ हुई न?

दादाश्री : जागृति रखनी ही नहीं होती है, वह रहती ही है। ये तो बेकार ही इधर-उधर झाँकते हैं इसलिए फिर उल्टा हो जाता है। आत्मा है, फिर वह और कहाँ चला गया? क्रिया करते समय फिर वह क्रिया कौन करता है? अहंकार जो क्रिया करता है, ज्ञाता उसे देखता है। 'कहाँ पर ठीक नहीं था और कहाँ ठीक हो गया? ऐसे कहाँ चूक गए?' आत्मा ऐसा सब देखता है। फिर उसे वह स्पष्ट हो जाता है।

किसी व्यक्ति की आँखें नहीं हैं, यानी कि अंधा है। उसमें शक्ति बहुत है, घोड़े जैसी है और किसी दूसरे व्यक्ति के दोनों पैर कट गए हैं। अगर उसे अंधे ने कंधे पर बैठाया हो तो दोनों की गाड़ी चलेगी या नहीं? वह अंधा कहेगा, 'भाई, तू ऊपर बैठ जा। तू मुझे रास्ता दिखाना।'

तब अंधा फिर किच-किच कब करता होगा? जब कोई तकलीफ आए तभी शिकायत करता है। तब लंगड़ा उसे मार्गदर्शन देता है। देखने वाला, 'आत्मा' देखता रहता है लंगड़े की तरह और अंधा (अहंकार) चलता रहता है। इस तरह का व्यवहार चलता है। उस समय आत्मा कहीं चला नहीं जाता।

जहाँ व्यवहार को ही आत्मा माना है और 'मैं ही ज्ञाता हूँ', वहाँ पर दोनों साथ चलते रहते हैं। वह अलग नहीं होता। 'मैं ही देखता हूँ और मैं ही करता हूँ', पहले ऐसी स्थिति थी न? मैंने सुना, मैंने देखा और फिर खुद को ही ज्ञाता-द्रष्टा मानता है।

जिस प्रकार उसका ज्ञातापन चला नहीं जाता, उसी प्रकार द्रष्टापन भी नहीं जाता लेकिन अनुभवपूर्वक होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : अनुभवपूर्वक यानी क्या?

दादाश्री : एक बार देखा हुआ हो तो दूसरी बार दिखाई दे। ज्ञान यानी अनुभव। जितने अनुभव हो चुके हैं, उतने में वैसा रहता ही है। दर्शन यानी प्रतीति। ज्ञान यानी अनुभव।

प्रश्नकर्ता : इन फाइलों का *निकाल* करते समय तो उपयोग रखना पड़ता है, तो उस समय कौन सी दशा रहती है?

दादाश्री : इन फाइलों का *निकाल* करते समय यह जो उपयोग रखा न, वही शुद्ध उपयोग है। उस फाइल का समभाव से *निकाल* करके उसे जाने देना, ज्ञान से शुद्ध करना, वही शुद्ध उपयोग है।

कुछ लोगों को अजागृति रहती है न, इसलिए फाइलों का *निकाल* नहीं हो पाता और ऐसा मानो न, कि यदि आप पर बहुत (फाइलों का) दबाव आ जाए तो अंदर कितना *निकाल* करना बाकी रह जाएगा। एकदम से बहुत दबाव आ जाए, एट ए टाइम बहुत सी फाइलें आ जाएँ तो कुछ का *निकाल* हो जाएगा और कुछ *निकाल* हुए बगैर चली जाएँगी। ऐसा होता है या नहीं होता?

प्रश्नकर्ता : हाँ, होता है। ऐसा होता है!

दादाश्री : इन्हें तो, दबाव नहीं आता, तब भी (कितनी ही फाइलें) चली जाती हैं, ऐसी बात है। उपयोग रखे बगैर किया गया व्यवहार फिर से साइन करवाने आएगा। तब उपयोग रखोगे तो व्यवहार छूटेगा। कभी न कभी, देखकर ही उस व्यवहार का *निकाल* करना होगा। इसलिए हम कहते हैं न, कि जितनी फाइलें बिना देखे चली जाएँगी, वे सभी वापस आएँगी।

हमारी आज्ञा में रहा, वह शुद्ध उपयोग में रहा, ऐसा कहा जाएगा। जो भी फाइल आई, उसका समभाव से *निकाल* करना है। इस पर यदि कोई ध्यान नहीं दोगे तो उसे, 'समभाव से *निकाल*' नहीं कहा जाएगा और यदि ध्यान दोगे तो वह शुद्ध उपयोग है। हमारे पाँच वाक्य शुद्ध उपयोग वाले ही हैं।

कभी भी ऐसे परिणाम बदलें कि 'क्या होगा' तो सब बिगड़ेगा। कुछ नहीं होगा, कुछ होना ही नहीं है। यदि हमारा उपयोग शुद्ध है तो दुनिया में कोई भी नाम देने वाला नहीं है और शुद्ध उपयोग बिगड़ा तो सब चढ़ बैठेगा।

प्रश्नकर्ता : यों तो ऐसा कहा जाता है न, कि यदि दो घड़ी के लिए भी शुद्ध उपयोग रहे तो सर्वांश केवलज्ञान हो जाता है?

दादाश्री : नहीं होता। शुद्ध उपयोग, वह केवलज्ञान ही कहलाता है, लेकिन वह अंश केवलज्ञान कहलाता है। सर्वांश केवलज्ञान नहीं

कहलाता। क्योंकि पचता नहीं है इस काल में। अक्रम है न।

इसीलिए मैं कहता हूँ न, कि एक गुणस्थानक, अड़तालीस मिनट तक लगातार सब के शुद्धात्मा देखते-देखते जाएँ तो वह शुद्ध उपयोग है। यानी एक ओर गधा दिखाई देता है और दूसरी ओर शुद्धात्मा दिखाई देता है, ऐसे देखते-देखते जाएँ तो उसे शुद्ध उपयोग कहा जाएगा। जब अन्य जीवों को आप शुद्धात्मा देखते हो तब आपका शुद्ध उपयोग रहता है।

जैसा है वैसा, यथार्थ देखने के जिनके भाव हैं, ज्ञानी पुरुष द्वारा दी गई दृष्टि से देखने के जिनके भाव हैं, उन्हें शुद्ध उपयोग प्राप्त हो ही जाता है!

अब तो हमें मूल बात पर ही आ जाना है। आपने जो स्टैन्डर्ड जान लिया है, उस स्टैन्डर्ड की पुस्तकों की ज़रूरत नहीं रही न आपको? अब, आत्मा की हकीकत क्या है और आत्मा के तौर पर कैसे बरतना है, इतना ही देखना बाकी रहा।

प्रज्ञा के उपयोग में जगत् भीतर झलके

प्रश्नकर्ता : एक बार आपने सत्संग में कहा था कि एक स्टेज ऐसी आती है कि चंदूभाई करता है और हम उसमें ही तन्मयाकार होते हैं। दूसरी स्टेज ऐसी आती है कि चंदूभाई अलग और खुद अलग, यानी यह कर्ता अलग और खुद अलग और तीसरी टॉप की स्टेज ऐसी है कि चंदूभाई क्या कर रहे हैं, उसे भी देखता है, आत्मा चंदूभाई को देखता है, वह समझाइए ज़रा।

दादाश्री : उसमें क्या समझना है?

प्रश्नकर्ता : वह कौन सा स्टेज कहलाता है?

दादाश्री : ऐसा है न, देखने के कार्यों में लगे हो तो वह देखने का कार्य सहज होना चाहिए। देखना, उसे करना पड़ता है, ज्ञाता-द्रष्टा रहना पड़ता है इसलिए उसे भी जानने वाला ऊपर है। ज्ञाता-द्रष्टा रहना पड़ता है। फिर, वह मैनेजर हो गया वापस। वापस उसका ऊपरी रहा। उस अंतिम ऊपरी को तो देखना नहीं पड़ता, सहज ही दिखाई देता है।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् यह ज्ञाता-द्रष्टा देखना पड़ता है, 'वह' कौन और 'इसे' भी जो देखने वाला है, वह कौन?

दादाश्री : 'इसे' भी देखता है, वह 'मूल' (स्वरूप)। जिसे देखना पड़ता है वह बीच वाला, उपयोग। अर्थात् इसे भी जानने वाला, वह पूर्ण अंतिम दशा में। जैसे कि आईने के सामने हम ऐसे बैठे हों तो हम सभी तुरंत आईने में दिखाई देते हैं न?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : उसे क्या देखना पड़ता है?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : इसी तरह आत्मा में झलकता (प्रतिबिंबित होता है) है, सब कुछ पूरा जगत् अंदर झलकता है।

प्रश्नकर्ता : वह 'बीच वाला' कौन है, दादा?

दादाश्री : उपयोग।

प्रश्नकर्ता : वह उपयोग, लेकिन किसका उपयोग है?

दादाश्री : वह, उस 'प्रज्ञा' का। प्रज्ञा के उपयोग में आ गया। वास्तव में तो अपनी जो प्रज्ञाशक्ति है न, वही सब देखने वाली है, वही आत्मा है। लेकिन वह आत्मा खुद नहीं देखता।

खुद की जो शक्ति है, वह काम करती है। उसने देखा तो बस हो गया। आप ज्ञाता-द्रष्टा हो गए। अर्थात् वह जो प्रज्ञा है, मूल आत्मा का भाग, उससे सब कुछ देख सकते हैं। आप में प्रज्ञा उत्पन्न हो चुकी है लेकिन जब तक निरालंब नहीं होंगे, तब तक प्रज्ञा पूर्ण रूप से काम नहीं करेगी।

तब तक प्रज्ञा ही ज्ञाता-द्रष्टा

प्रश्नकर्ता : हम यह जो ज्ञाता-द्रष्टा भाव में रहते हैं, तो उस ज्ञाता-द्रष्टा भाव में प्रज्ञा रहती है या आत्मा?

दादाश्री : नहीं, अभी प्रज्ञा ज्ञाता-द्रष्टा है। प्रज्ञा वह आत्मा का ही भाग है। अभी सारा काम प्रज्ञा कर रही है। वह प्रज्ञा जब आत्मा में एक हो जाती है तब केवलज्ञान होता है और केवलज्ञान होने के कुछ समय बाद मोक्ष में चला जाता है।

प्रश्नकर्ता : अभी आपका, ज्ञानी पुरुष का आत्मा तो ज्ञाता-द्रष्टा है। हम में प्रज्ञा ज्ञाता-द्रष्टा है।

दादाश्री : मुझ में भी वह प्रज्ञा है। जब तक केवलज्ञान नहीं हो जाता, तब तक प्रज्ञा है।

प्रश्नकर्ता : तो फिर आत्मा सब कुछ जानता है, देखता है। क्या आत्मा ही जानता और देखता है?

दादाश्री : वही, लेकिन वह प्रज्ञा नामक भाग है।

प्रश्नकर्ता : तो इस ज्ञान प्राप्ति के बाद जो खुद की प्रकृति को देखता है, वह खुद कौन देखता है?

दादाश्री : वह आत्मा देखता है! और कौन? सब कुछ आत्मा के सिर पर। आत्मा अर्थात् फिर वही, प्रज्ञा। यहाँ फिर इसे सीधा आत्मा नहीं मानना है। आत्मा अर्थात् पहले प्रज्ञा ही यह सारा कार्य करती है लेकिन हम उसे आत्मा बोलते हैं। बोलते हैं बस इतना ही है।

प्रश्नकर्ता : मैं तो पहले ऐसा समझा था कि हम महात्माओं में ज्ञान लेने के बाद प्रज्ञा ही जागृति सही रखती है। कोई भी दोष होने पर तुरंत ही वह टोकती है कि, 'इतने ये-ये दोष हुए हैं'।

दादाश्री : हाँ, सचेत करती रहती है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन यह जो ज्ञाता-द्रष्टा रहता है, वह ठीक से समझ में नहीं आया था।

दादाश्री : नहीं, सब जगह वह प्रज्ञा ही ज्ञाता-द्रष्टा है। आत्मा सिर्फ केवलज्ञान को ही देख सकता है।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् जब केवलज्ञान होता है तभी आत्मा ज्ञाता-द्रष्टा होता है, तब तक प्रज्ञा ही काम करती है।

दादाश्री : इसे भी आत्मा ही कहा जात है। इसे अलग मत करना। इस तरह से आप इसे अलग करने जाओगे, तो आपको समझ में नहीं आएगा।

प्रश्नकर्ता : तो फिर प्रज्ञा क्यों कहते हैं, आत्मा ही कह दीजिए न?

दादाश्री : हाँ! तो ऐसा कह देते हैं लेकिन उसमें भी लोग खुद की समझ ले आते हैं। समझाने के लिए विस्तारपूर्वक कहा है। विस्तार का अर्थ ऐसा मत करना कि यों...

प्रश्नकर्ता : इसे बारीकी से समझें तो प्रज्ञा और सामान्य रूप से समझना हो तो आत्मा। तो फिर क्या मूल आत्मा सचेत नहीं करता?

दादाश्री : हाँ, वह मूल आत्मा सचेत नहीं

करता, अभी यह प्रज्ञा सचेत कर रही है। बाद में वह एक ही हो जाती है। जब अपनी पूरी रामायण खत्म हो जाती है, तब वह भी (आत्मा में) एक हो जाती है।

जिस ज्ञान से संसार छूट जाता है, वह आत्मज्ञान कहलाता है और जिस समय उस ज्ञान का उपयोग होता है, उस समय उसे प्रज्ञा कहा जाता है।

जो वर्तना में रखवाता है, वह आत्मा है और जो श्रद्धा में रखवाता है, वह प्रज्ञा है। वर्तन अर्थात् चारित्र।

प्रश्नकर्ता : आप में उस देखने वाले को प्रज्ञा कहा जाएगा या आत्मा? आपके संदर्भ में प्रज्ञा नहीं कहा जाएगा या प्रज्ञा कहा जाएगा?

दादाश्री : प्रज्ञा ही कहा जाएगा। प्रज्ञा के सिवा तो अन्य कुछ कह ही नहीं सकते। आत्मा तो कह ही नहीं सकते। संसार दशा में यह प्रज्ञा ही काम करती रहती है। सचेत करती है, अंदर सब कुछ वही करती है।

एक्ज़ेक्ट समझ, ज्ञाता-द्रष्टा की

प्रश्नकर्ता : ज्ञाता-द्रष्टा की बात मुझे एक्ज़ेक्ट समझाइए। ज्ञाता अर्थात् मन-बुद्धि के आधार पर और द्रष्टा, वह आँख के आधार पर है या फिर चित्त के आधार पर है? आँख बंद हो तब द्रष्टा कैसे रहा जा सकता है?

दादाश्री : मन में जो विचार आते हैं न, वे सूक्ष्म संयोग हैं। उन्हें देखना है।

प्रश्नकर्ता : उन्हें किससे देखना है? मन से, बुद्धि से?

दादाश्री : आप जिससे देखोगे न, तब वहाँ मन-बुद्धि नहीं होंगे, वहाँ आँखें भी नहीं होंगी।

प्रश्नकर्ता : यही उलझन है, पता ही नहीं चलता।

दादाश्री : यह जो मन-बुद्धि से देखते हैं न, वह ज्ञाता-द्रष्टापन नहीं कहलाता। यानी आप सूक्ष्म संयोगों को देखते हो, अंदर मन के संयोगों को, वह ज्ञातापन है। यह ज्ञातापन मन-बुद्धि के आधार पर नहीं है, दृष्टा आँख के आधार पर नहीं है, चित्त के आधार पर भी नहीं है। यह प्रज्ञाशक्ति के आधार पर है।

प्रश्नकर्ता : वह ज्ञाता-द्रष्टा कौन रहता है?

दादाश्री : कोई चंदूभाई थोड़े ही रहने वाले थे? वहाँ अहंकार थोड़े ही रहने वाला था? ज्ञाता-द्रष्टा तो प्रज्ञाशक्ति, जो मूल आत्मा की एजेन्ट है, वह रहती है!

प्रश्नकर्ता : आँखें बंद हों, तब भी क्या द्रष्टापन रहता है?

दादाश्री : आँखें बंद हों या खुली हों, तब भी रहता है। अर्थात् यह सब जो आँखों से दिखाई देता है न, वह ज्ञाता-द्रष्टापन नहीं कहलाता। बुद्धि से जो समझ में आता है, वह ज्ञाता-द्रष्टापन नहीं कहलाता। अंदर प्रज्ञा से इस मन की स्थिति को देखता है, मन क्या-क्या सोच रहा है वह सब देखता है।

प्रश्नकर्ता : हर एक को ज्ञाता-द्रष्टापन प्राप्त हो सकता है?

दादाश्री : वह तो, जब ज्ञानी पुरुष पाप धो देते हैं उसके बाद दिखाई देता है, नहीं तो मन के पर्याय देख ही नहीं सकता न! बड़े-बड़े, मोटे-मोटे हों वे दिखाई देते हैं, अन्य चीज़ें दिखाई ही नहीं देती न! विचार आएँ उन्हें देखो, ये सब जो विचार आते हैं उन्हें देखते रहना हैं।

पूरी फाईल नं-1 क्या कर रही है, उसे

देखना और जानना, वही ज्ञाता-द्रष्टापन है। यह बाहर का तो, ये सभी लोग भी ऐसा कहते हैं कि हम जानते हैं। यह बंगला देखा और जाना। प्रज्ञा (इसमें) बाहर का नहीं जानती। वह इन्द्रिय ज्ञान में हेल्पिंग नहीं होती। ये आँखों से जो देखते हैं वह सब इस इन्द्रियज्ञान से ही है न, ये सब कान से सुनते हैं, जीभ से चखते हैं, वह सारा इन्द्रियज्ञान है। मन से, इस मन को छठी इन्द्रिय माना जाता है। फिर बुद्धि से, बुद्धि भी वही की वही है। बुद्धि से जो कुछ जानता है, वह सारा अज्ञान है। वह सब ज्ञेय में जाता है। अब बुद्धि को अज्ञा कहते हैं और शुद्धात्मा उसे प्रज्ञा से जानता है। अज्ञा ने जो किया है, उसे प्रज्ञा जाने, उसी को अंतिम ज्ञान कहते हैं।

प्रश्नकर्ता : आज्ञा में रहने से हेल्प होती है न?

दादाश्री : आज्ञा में रहे तो सब कुछ हो गया, कम्पलीट हो गया, यदि वह आज्ञा में रहा तो!

ज्ञाता-द्रष्टा, बुद्धि से या आत्मा से?

प्रश्नकर्ता : मैं ज्ञाता-द्रष्टा होकर देखने का प्रयत्न करता हूँ, उस समय भी बुद्धि ही देख रही होती है ऐसा लगता है।

दादाश्री : यह सही कह रहे हो। बुद्धि ही देखती है। ज्ञाता-द्रष्टा तो, जहाँ बुद्धि भी नहीं पहुँच सकती, वहाँ ज्ञाता-द्रष्टा शुरू होता है।

'वह ज्ञाता-द्रष्टा से देखने का प्रयत्न करता हूँ,' 'प्रयत्न करता हूँ' कहते हैं इसलिए वह बुद्धि ही है। अब बुद्धि का *चलण* (वर्चस्व) होता है, उस समय बुद्धि देख रही होती है ऐसा लगता है लेकिन वह जो कहता है, वह ज्ञान है। उसे 'आपने' 'देखा'। 'देखा' अर्थात् ज्ञाता के तौर पर देखा ऐसा नहीं कहा जाएगा लेकिन यह द्रष्टा के तौर पर 'देखा।' क्योंकि ज्ञाता-द्रष्टा के तौर पर देखा कब कहा जाएगा? 'ऐसा लगता है' तब द्रष्टा के तौर पर देखा और 'जानने में आता है' तब ज्ञाता के तौर पर जाना। देखने वाले तो 'आप' ही हैं या और कोई साहब आए थे?

प्रश्नकर्ता : लेकिन ऐसा लगता है वह जो कहता है वह बुद्धि ही कहती है, ऐसा लगता है।

दादाश्री : वह बुद्धि नहीं है, वह बुद्धि देखने में होती है, यानी बुद्धि उस तरफ से देखती है और वह क्या देख रही है, उसे 'हम' जानते हैं कि 'यह बुद्धि ही देख रही है, मैं नहीं देख रहा हूँ।' अत: जो बुद्धि को देखता है, वह 'हम' हैं। अत: वहाँ 'हम' खुद द्रष्टा की तरह काम करते हैं। अत: देखने वाला कौन है, वह 'हमने' ढूँढ निकाला। अर्थात् यह द्रष्टा काम तो कर रहा है!

प्रश्नकर्ता : लेकिन बुद्धि से परे नहीं जा पाते, तो यह बुद्धि में रहकर ही देखा जा रहा है?

दादाश्री : नहीं, बुद्धि से परे तो जा पाए हो लेकिन बुद्धि को अभी भी पोषण मिल रहा है। बुद्धि को कुछ कारणों की वजह से पोषण मिलता है, वह धीरे-धीरे कम हो जाता है। बाकी, बुद्धि से परे तो गए ही हैं वर्ना बुद्धि इन्हें यहाँ पर रोज़ आने ही नहीं देती।

प्रश्नकर्ता : बुद्धि जब ज़रा दखल करती है, तब कहते हैं कि 'एक तरफ बैठ। मैं तो दादा के पास जाऊँगा। अरे, छोड़ न!'

दादाश्री : हाँ, इसलिए 'अरे, छोड़ न' कहना!

प्रश्नकर्ता : दादा के पास आने में बुद्धि

दखल नहीं करती, वह तो आती है, बिल्कुल प्रेम से।

दादाश्री : प्रेम से इसका मतलब ही यह है कि जो बुद्धि से ऊपर गया है, वह यह ज्ञान है। यह प्रज्ञा का काम है।

बुद्धि यह देखती है लेकिन आपको मन में ऐसा लगा कि 'मैं देख रहा हूँ,' वह भ्रांति है। इन सब ज्ञेय चीज़ों का ज्ञाता-द्रष्टा 'मैं' हूँ ऐसा नहीं लगता, लेकिन यह बुद्धि लगती है। लेकिन इस बुद्धि का ज्ञाता-द्रष्टा कौन है? आत्मा। लोग तो इसे क्या कहते हैं? 'मैं ही देख रहा हूँ, मैं ही देख रहा हूँ' ऐसा लगता है। लेकिन आप क्या कहते हो? 'यह बुद्धि देख रही है' ऐसा लगता है। नहीं तो लोग तो ऐसा ही कहते हैं कि 'मुझे यह दिख रहा है' और वह 'मैं देख रहा हूँ' वही भ्रांति है।

यदि 'जानने में' आ जाए तो रियल (असली) ज्ञाता कहलाता है। वह यह ज्ञाता-द्रष्टा है! और आपको बार-बार अनुभव में आता ही है लेकिन ऐसा मेल बैठाना पड़ता है।

प्रश्नकर्ता : उस डिमार्केशन का ख्याल किस तरह से आता है कि यह बुद्धि का देखना-जानना है और यह 'खुद का' देखना-जानना है?

दादाश्री : बुद्धि का तो ऐसा है कि ये जो आँखों से दिखाई देता है वही देखना-जानना है और जो कानों से सुनाई देता है वह, जीभ से चखते हैं वह, वह सब बुद्धि है।

प्रश्नकर्ता : यानी यह इन्द्रियों का हुआ, लेकिन और जो भी अंदर चल रहा होता है, बुद्धि का देखना कि ये पक्षपाती हैं, ऐसे हैं, वैसे हैं, वह सब भी बुद्धि ही देखती है न?

दादाश्री : यह सब देखना, वह बुद्धि का ही है। और आत्मा का ज्ञान-दर्शन तो देखना और जानना, वह अलग चीज़ है। द्रव्यों को देखे-जाने, द्रव्यों के पर्याय को जाने, उनके गुणों को जाने वह सब देखना-जानना, उसे आत्मा कहते हैं। या फिर मन के सारे पर्यायों को जाने। बुद्धि तो मन के पर्यायों को कुछ हद तक ही जान सकती है, जबकि आत्मा मन के सारे पर्यायों को जानता है। बुद्धि को, परिस्थितियों को जानता है, अहंकार के पर्यायों को जानता है, सब कुछ जानता है। जहाँ बुद्धि नहीं पहुँच सकती, वहाँ फिर इसका (आत्मा का) शुरू होता है।

प्रश्नकर्ता : यह बुद्धि कहाँ तक का देख सकती है?

दादाश्री : कुछ हद तक का। सांसारिक ज्ञान चलता है, सांसारिक काम-काज।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् यह जो आत्मा का देखना-जानना कहा गया है, तो वह द्रव्यों को जानता है?

दादाश्री : हाँ।

प्रश्नकर्ता : वह द्रव्य को, द्रव्य के गुणधर्म और द्रव्य के पर्याय को अर्थात् उन्हें किस तरह से, उसमें क्या-क्या देख सकता है? उसका एक्ज़ेक्ट उदाहरण दीजिए न!

दादाश्री : ये किसके गुणधर्म हैं, ऐसा सब जानता है। *पुद्गल* के गुणधर्म हैं या चेतन के गुणधर्म हैं। फिर अन्य सारे गुणधर्मों को भी जानता है। आकाश के गुणधर्म क्या हैं, उन्हें जानता है। फिर काल के क्या गुणधर्म हैं, उन्हें जानता है।

प्रश्नकर्ता : वे गुणधर्म बताइए न! काल के गुणधर्म क्या हैं? आकाश के गुणधर्म क्या हैं?

दादाश्री : वह तो पैंतालीस आगमों को

जानने का फल है। यानी इन सब के गुणों को जानना। काल के, आकाश के, सब के गुण, गुणधर्मों को जानना वहाँ।

प्रश्नकर्ता : आत्मा की ज्ञानक्रिया और दर्शनक्रिया में यदि ऐसा जानना और देखना है तो फिर अभी तो हम सभी का तो ऐसा नहीं है न, द्रव्य को देखना और जानना?

दादाश्री : उसके लिए ऐसी कोई जल्दबाज़ी करने का अर्थ ही नहीं है न! ऐसा नहीं जानने-देखने की वजह से थोड़े ही खटमल मारने की दवाई पी जाए?

प्रश्नकर्ता : तो तब तक क्या होता है? तो फिर वह ज्ञान-दर्शन का देखनापन नहीं रहा ऐसा हुआ?

दादाश्री : राग-द्वेष नहीं हों, तब हमें जानना हैं कि हमें ज्ञान की प्राप्ति हुई है, अच्छा है। राग-द्वेष हों तो संसार बंधता है, वह तय हो गया। राग-द्वेष नहीं हों यानी अपनी गाड़ी चल रही है, राजधानी एक्सप्रेस। तुझे देखने की ज़रूरत भी नहीं है, चल रही है या नहीं!

प्रज्ञा की मात्र ज्ञानक्रियाएँ

प्रश्नकर्ता : इस *पुद्‍गल* की सभी चीज़ों को जो देखता है, वह देखने की पूरी जो क्रिया है, वह बुद्धिक्रिया है या ज्ञानक्रिया है?

दादाश्री : वह यों देखा जाए तो प्रज्ञा के विभाग में ही जाती है न! अहंकार और बुद्धि की क्रिया से थोड़ा समझ में आता है, बाकी प्रज्ञा के बिना समझ में नहीं आ सकता।

प्रज्ञा, वह ज्ञान का ही स्वरूप है, उसी का भाग है लेकिन जब तक यह शरीर है तब तक उसे प्रज्ञा कहा जाता है और सभी कार्य वही करती है। और जब शरीर नहीं होता तब आत्मा कहा जाता है।

प्रश्नकर्ता : क्योंकि आत्मा कुछ भी नहीं करता इसलिए उसके एजेन्ट के रूप में प्रज्ञा सब कुछ करती है?

दादाश्री : हं, वह कर्ता के तौर पर नहीं, सिर्फ ज्ञानक्रियाएँ करती हैं।

वही प्रज्ञाशक्ति की ही ज्ञानक्रिया है। अभी वह ज्ञानक्रिया तो उत्पन्न हो गई है। फिर जब इन सभी फाइलों का *निकाल* हो जाएगा तब, विज्ञानक्रिया।

आत्मा की ज्ञानक्रिया और दर्शनक्रिया

प्रश्नकर्ता : व्यवहार में मात्र ज्ञाता-द्रष्टा की तरह हूँ, ऐसा किस प्रकार से रहा जा सकता है?

दादाश्री : व्यवहार में खुद कर्ता के रूप में है और वास्तव में वह ज्ञाता-द्रष्टा है। अब व्यवहार में वह किस चीज़ का कर्ता है? तब कहते हैं संसार का कर्ता है और वास्तव में ज्ञाता-द्रष्टा अर्थात् दर्शनक्रिया और ज्ञानक्रिया का कर्ता है। अन्य कोई क्रिया नहीं है, वहाँ सांसारिक क्रिया नहीं है।

ज्ञान उपयोग वह ज्ञानक्रिया कही जाती है और दर्शन उपयोग वह दर्शनक्रिया कही जाती है। अब ज्ञान उपयोग क्या है? तब कहते हैं, यह जो क्रिया वाला *पुद्‍गल* है वह खुद की क्रिया में परिणमन करता है, उन सब क्रियाओं को देखने वाला यह ज्ञान उपयोग है! किसी भी पौद्‍गलिक क्रिया का कर्ता नहीं है। वह अपने खुद के स्वभाव का कर्ता है, न कि परभाव का कर्ता है।

मोक्ष के लिए ज्ञानक्रिया की ज़रूरत है। अज्ञानक्रिया वह बंधन है। अभी आप जो कुछ

भी करते हो न, उसमें वे चंदूभाई कर रहे हैं, ऐसा आप जानते हो, 'व्यवस्थित' कर्ता है ऐसा जानते हो। आप उसे देखते रहते हो, वह ज्ञानक्रिया है। आप जो *निकाल* करते हो, वह सब ज्ञानक्रिया कहलाती है। उस ज्ञानक्रिया से मोक्ष है। ज्ञान सहित जो कुछ भी क्रिया होती है, उसके आधार पर मोक्ष होता है। ज्ञान उपयोग को ज्ञानक्रिया कहते हैं। और ज्ञानक्रिया से यह सारा हल आ गया।

ज्ञानधारा-क्रियाधारा चले दोनों भिन्न

प्रश्नकर्ता : मैं तो यह समझना चाहता था कि यह कर्तृत्व की धारा और ज्ञातृत्व की धारा दोनों एक साथ नहीं चल सकतीं : ऐसा कहा गया था लेकिन हमारी तो दोनों साथ-साथ चलनी ही चाहिए न?

दादाश्री : नहीं, साथ-साथ नहीं चलनी चाहिए। ऐसा है न कि कर्तृत्व की जो धारा आती है, वह उदय के अधीन है और हम ज्ञाता हैं।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् वह हो रही है और यह देखने वाला है।

दादाश्री : हाँ, वह हो रहा है और यह देखता रहता है। दूसरा कोई खेल नहीं करना है। चंदूभाई को जानते रहना, वही आत्मा है, शुद्धात्मा है क्योंकि करने वाला और जानने वाला दोनों का व्यवहार जो एक साथ था वह अब अलग-अलग हो गया है। पहले दोनों का व्यापार एक साथ था, करने वाला भी मैं और जानने वाला भी मैं। अर्थात् क्या हो रहा था? दोनों धाराएँ, जानने की धारा वह अमृतधारा है और करने की धारा वह विषधारा, दोनों धाराएँ एक साथ चल रही थीं। अत: अपने ज्ञान के बाद क्या हुआ है? दोनों धाराओं को अलग कर दिया है। अब यह शुद्धात्मा की अमृतधारा अलग है और यह विषधारा अलग है। इसमें यह विज्ञान है, इसमें थोड़ी सी भी गलती करोगे तो मार खा जाओगे। सर्दी के दिनों में यह बटन दबा दिया, तो पूरी रात वे सारे पंखे चलने लगे। तो उस घड़ी क्या दशा होगी? मेरे पास आकर ज़रा समझना पड़ेगा यह विज्ञान! यह बहुत समझने जैसा है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन कभी ऐसा कुछ हो जाए और मन में ऐसा लगे कि अरे, मैं ऐसा कहाँ कर बैठा तो?

दादाश्री : 'मैं' आना ही नहीं चाहिए। 'मैं' शब्द, खुद कर्ता है ही नहीं तो फिर 'मैंने किया' ऐसा बोल ही कैसे सकते हैं? खुद कर्ता है ही नहीं किसी क्रिया का, ज्ञाता-द्रष्टा हो गया है। आपको कौन सा पद दिया है?

प्रश्नकर्ता : ज्ञाता-द्रष्टा पद।

दादाश्री : और आप 'मैंने किया' ऐसा कहो वह तो इनवोल्व हो गया, वह तो गलत ही है न! 'मैंने किया' ऐसा आप कह ही नहीं सकते। आपको शंका होती है तो वे वृत्तियाँ जाती हैं, आप खुद नहीं जाते। वे तो वृत्तियाँ जाती हैं। इसलिए ऐसा लगता है कि 'मैं उसमें गया।' अरे, आप उसमें नहीं गए, आप उसमें कैसे हो सकते हो! मैं तो ज्ञाता-द्रष्टा वाला हूँ। आपको यह सारा विज्ञान समझ में आया? कोई भी हिला नहीं सकता, ऐसा यह विज्ञान है।

यह कर्तापन फिर *पुद्गल* का रहा, आपके ज्ञाता होने के बाद आपका कर्तापन रहा ही नहीं न! जो करता है वह जानता नहीं है और जो जानता है वह करता नहीं है। कर्ताभाव और द्रष्टाभाव दोनों अलग हैं। मुझे यह हुआ, मैं कर रहा हूँ, ऐसा नहीं लेकिन 'मैं यह जानता हूँ' ऐसा रहे, ज्ञाता-द्रष्टा रहे, तो कॉज़ (बीज़) नहीं डलेगा।

प्रश्नकर्ता : आपने पद तो ज्ञाता-द्रष्टा का दिया है न?

दादाश्री : हाँ।

प्रश्नकर्ता : तो आप ऐसा कह रहे थे कि हमारे महात्माओं का द्रष्टा पद रहता है और हमारा पद ज्ञाता-द्रष्टा है।

दादाश्री : हाँ, आपका द्रष्टा रहता है। दर्शन खुला है न, इसलिए द्रष्टा पद रहता है।

प्रश्नकर्ता : ज्ञाता पद नहीं है?

दादाश्री : अब ज्ञाता वह तो अनुभव होते-होते होता है। जितना अनुभव होता है उतना ज्ञाता रहा जाता है।

इन्हें किसी ने गाली दे दी, तो उस घड़ी हिल जाएँगे लेकिन वापस मन में ऐसा लगेगा कि नहीं, जिसे गाली दी वह मेरा स्वरूप नहीं है। यानी अनुभव हुआ इसलिए फिर अगली बार वह ज़रा ज़्यादा रहेगा। उसके बाद यों ज्ञान में रहते-रहते-रहते ज्ञाता पद में आ जाता है।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् जैसे-जैसे जागृति बढ़ती है, वैसे-वैसे ज्ञाता पद बढ़ जाता है?

दादाश्री : जागृति तो है ही लेकिन वे जो हिसाब हैं न, उन हिसाबों को चुकाए बगैर जागृति नहीं रह सकती। जैसे-जैसे हिसाब चुकता होता जाता है, वैसे-वैसे ज्ञान बढ़ता जाता है। दर्शन और ज्ञान दोंनो मिल जाते हैं, उसे चारित्र कहते हैं। उस घड़ी अंदर तप की ज़रूरत पड़ती है! अनुभव तो उस समय अंदर कचोटता रहता है, जैसे कि पट्टी उखाड़ें तो एक-एक बाल को साथ में लेकर उखड़ती है न! अंदर हृदय तप जाता है, अच्छी तरह से तप जाता है, वह अदीठ तप है! अदीठ तप किसी को दिखाई नहीं देता। चेहरे से पता चलता है लेकिन अदीठ तप बाहर दिखाई नहीं देता और ये लोग जो बाह्य तप करते हैं, उसका फल सांसारिक है जबकि अदीठ तप का फल मोक्ष है। जगत् में अदीठ तप होता ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : दादा, हमें तो समय लगेगा न? अभी तो हमारा द्रष्टा पद ही रहेगा न?

दादाश्री : द्रष्टा पद तो बहुत उच्च पद कहलाता है।

प्रश्नकर्ता : नहीं, यानी कि हमारा तो द्रष्टा पद ही रहेगा न या ज्ञाता पद आएगा?

दादाश्री : द्रष्टा पद तो रहता है लेकिन फिर ज्ञाता पद में प्रवेश करता जाता है न पूरे दिन। अतः निरंतर पुरुषार्थ चल ही रहा है न!

प्रश्नकर्ता : यानी चलता ही रहेगा?

दादाश्री : पुरुषार्थ निरंतर चलता ही रहता है, पुरुष होने के बाद और इसीलिए ये पाँच आज्ञा दी है, पुरुषार्थ करने के लिए ही। निरंतर पुरुषार्थ जारी ही रहता है। संयम के परिणाम ही आते रहते हैं। लोग भी देखते हैं कि अभी तो झगड़ा कर रहे थे न, मतभेद और बोला-चाली हो गई थी और वापस फिर से एक साथ बैठकर खा-पी रहे हैं, क्या हो गया यह? यह है संयम परिणाम।

दिखाए, वह प्रज्ञा

प्रज्ञा ही देखती है अंत तक। प्रज्ञा ही हमें सब कुछ दिखाती है।

प्रश्नकर्ता : मैं जब दस साल का था तब मैंने क्या-क्या किया था, वह सब दिखाती है। बारह साल का था तब के भी सारे फोटो ऐसे दिखाती है, फिल्म की तरह दिखाती है। तो जो यह फिल्म दिखाती है, वह प्रज्ञा दिखाती है?

दादाश्री : प्रज्ञा अर्थात् आत्मा ही दिखाता है ऐसा कह सकते हैं। लेकिन अंत में (केवलज्ञान होने के बाद) प्रज्ञा बंद हो जाती है। जब तक प्रज्ञा है तब तक शुद्धात्मा है, और आत्मा, वह तो परमात्मा है। हैं एक ही, लेकिन इस पद में आने के बाद वह (बंद) हो जाता है!

प्रश्नकर्ता : कल वे रो रहे थे तो उन्हें दिख रहा था कि ये चंदूभाई रो रहे हैं लेकिन फिर अंदर से, 'दादा भगवान ना असीम जय-जयकार हो' चल रहा था तो चंदूभाई को जो देख रहा था, वह कौन था और जो 'असीम जय-जयकार' बोल रहा था, वह कौन था?

दादाश्री : वह तो अंदर रिकॉर्ड चलती ही रहती है।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् अंदर वह 'ओरिजिनल' टेपरिकॉर्ड चलती ही रहती है?

दादाश्री : वह तो कुछ टाइम तक चलती ही रहती है, अत: वह जो बोलता है, वह बोलने वाला अलग है और वह इन चंदूभाई को देखने वाला अलग!

प्रश्नकर्ता : चंदूभाई को देखने वाला, वह शुद्धात्मा है?

दादाश्री : चंदूभाई जो यह कर रहे हैं न, उसे देखने वाली बुद्धि है।

प्रश्नकर्ता : तो फिर ज्ञाता-द्रष्टा कैसे हुए, यदि बुद्धि ही देख रही हो तो?

दादाश्री : ज्ञाता-द्रष्टा तो इन सब को देखने वाले हैं, वे हैं। ज्ञाता-द्रष्टा इन सब को एट ए टाइम जानते हैं, वे हैं। यह अंदर लगता है उसे, यह जो बोला जा रहा है उसे, इन सब को एट ए टाइम जानते हैं।

प्रश्नकर्ता : बुद्धि क्या कर रही है उसे शुद्धात्मा देखता है?

दादाश्री : वह बुद्धि को देखता है, मन क्या कर रहा है उसे देखता है, वाणी कैसी है उसे और फिर अहंकार क्या कर रहा है, उन सब को देखता है।

प्रश्नकर्ता : वह ज्ञाता-द्रष्टा ही देखता है न? वह जो देखता है, वह ज्ञाता-द्रष्टा है या कौन?

दादाश्री : हाँ, वही आत्मा है।

प्रश्नकर्ता : और जो चंदूभाई को देखती है, वह बुद्धि है?

दादाश्री : वह बुद्धि देखती है और बुद्धि को जो देखता है वह आत्मा है। बुद्धि क्या कर रही है, मन क्या कर रहा है, अहंकार क्या कर रहा है, इन सब को जानने वाला वह आत्मा है। आत्मा से आगे परमात्मा पद रहा है। जो शुद्धात्मा हो गया, वह परमात्मा की तरफ गया और परमात्मा हुआ, उसे केवलज्ञान हो जाता है। केवलज्ञान हो गया तो हो गया परमात्मा। पूर्ण हुआ, निर्वाण पद के लायक हो गया। अत: देखने-जानने का उपयोग रखना चाहिए, पूरे दिन।

प्रश्नकर्ता : दादा, यानी शुद्धात्मा के बाद आगे परमात्मा पद है?

दादाश्री : शुद्धात्मा ही परमात्मा है लेकिन अभी इसमें केवलज्ञान नहीं हुआ है। जब इस शुद्धात्मा को केवलज्ञान होगा तब वह हो गया परमात्मा!

देखने वाले का भी देखने वाला

प्रश्नकर्ता : आप कहते हैं न कि जब हम ज्ञान देते हैं तब आत्मा और देह को अलग कर देते हैं, तो इन दोनों को अलग देखने वाला वह कौन है?

दादाश्री : दो चीज़ें हैं जो देखती हैं। एक तो प्रज्ञा है और प्रज्ञा का काम पूर्ण हो जाने के बाद आत्मा है। आत्मा ज्ञायक के रूप में रहता है। प्रज्ञा से लेकर आत्मा तक का देखने वाला है। प्रज्ञा का काम पूरा हो जाए तो फिर आत्मा खुद, ज्ञायक स्वरूप हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : आत्मा का जो स्वरूप है, वह दर्पण की तरह है। दर्पण बाहर नहीं आता देखने के लिए। दर्पण के अंदर सारे दृश्य झलकते हैं। इसी प्रकार आत्मा के स्वरूप में तो सभी चीज़ें झलकती हैं न, ऐसा है क्या?

दादाश्री : वह जो झलकता है, वह अलग है लेकिन यह तो ज्ञायक है! अर्थात् अभी ज्ञाता कौन है? वह प्रज्ञाशक्ति है। हाँ, क्योंकि वह कार्यकारी है। मूल आत्मा कार्यकारी नहीं होता। जब तक यह संसार है, तब तक के लिए कार्यकारी शक्ति खड़ी हो गयी है, प्रज्ञा। वह प्रज्ञा सारे कार्यों को पूरा करके, समेटकर फिर मोक्ष में चली जाती है।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् मोक्ष के दरवाज़े तक मदद करने के लिए यह प्रज्ञा है?

दादाश्री : दरवाज़े तक नहीं, मोक्ष में अंदर तक बैठा देती है। हाँ, पूर्णाहुति करवाने वाली यह प्रज्ञा है। ज़बरदस्त शक्तियाँ हैं। चाहे कैसे भी कष्ट आएँ, फिर भी कष्ट घबरा जाएँ, इतनी अधिक शक्तियाँ हैं। इतनी बढ़ी हुई शक्तियों को देखते ही कष्ट घबरा जाता है।

प्रश्नकर्ता : जितना देख पाते हैं, उतना असर नहीं करता और अगर उसमें एकाकार हो जाएँ, तो फिर असर महसूस होता है।

दादाश्री : जितना देख सको उतना देखना है और बाकी का जो नहीं देख पाते, उसके प्रतिक्रमण करने हैं।

प्रश्नकर्ता : अभी हम बैठते हैं और पूरे दिन का देखने बैठते हैं, तब सब कुछ दिखता है और उस घड़ी ऐसा भी दिखता है कि हम आगे का (पिछला) देखने बैठे हैं।

दादाश्री : हाँ। फिर?

प्रश्नकर्ता : तो यह क्या है? जो देखता है, उसे भी फिर से देखता है।

दादाश्री : वह जो है सब से अंतिम देखने वाला, वही हम (आत्मा) हैं। उस देखने वाले को आगे कोई देखने वाला नहीं रहता। और यह जो देखने वाला है, इसके पीछे सब से अंतिम देखने वाला होता है।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् देखने वाले के आगे भी देखने वाला होता है?

दादाश्री : यह जो देखने वाला है, इसके आगे भी देखने वाला होता ही है न!

प्रश्नकर्ता : तो उसके आगे भी देखने वाला होता है?

दादाश्री : फिर उसके आगे देखने वाला नहीं है। देखने वाले से आगे देखने वाला कोई नहीं है। वास्तव में जो देखने वाला है, वही आत्मा है।

प्रश्नकर्ता : तो पूरे दिन का देखने की यह जो प्रक्रिया थी तो इसे देखने वाला जो है, उसे भी देखने वाला और कोई होता है ऐसा है क्या? तो प्रथम देखने वाला कौन है?

दादाश्री : वह जो है उसे उपादान कहो, बुद्धि कहो या अहंकार कहो, और फिर उसे भी देखने वाला है।

प्रश्नकर्ता : वह कौन है?

दादाश्री : वह आत्मा है, जो देखने वाले को भी जानता है।

प्रश्नकर्ता : तो इसमें प्रज्ञा कहाँ से आई?

दादाश्री : वही प्रज्ञा है न! मूल आत्मा तो मूल आत्मा ही है।

प्रश्नकर्ता : तो पूरे दिन का जो देखता है वह अहंकार कहलाता है अथवा उपादान कहलाता है?

दादाश्री : बुद्धि, अहंकार, अज्ञाशक्ति।

प्रश्नकर्ता : ठीक है। दादा, अभी मैं सुबह का देखने बैठता हूँ, तो अभी का देखना रह जाता है, मैं पहले का (पिछला) देखता हूँ अभी।

दादाश्री : लेकिन देखता तो है न! वही तू आत्मा है, फिर वहाँ किसे देखना रह जाता है?

प्रश्नकर्ता : दादा, आपने कहा है कि आत्मा स्व-पर प्रकाशक है वह इसी को लेकर कहा है क्या? स्व-पर प्रकाशक है, वह क्या खुद को भी प्रकाशमान करता है?

दादाश्री : और क्या? जो देखने वाला है, उसके ऊपर भी देखने वाला होता है। उस देखने वाले के ऊपर जो देखने वाला है, वह आत्मा, ज्ञाता कहलाता है और जानने की सभी चीज़ें ज्ञेय कहलाती हैं और जब देखने वाला द्रष्टा होता है तब यह दृश्य होता है।

प्रश्नकर्ता : देखने वाले के ऊपर देखने वाला है, तो फिर मूल आत्मा का फंक्शन किस तरह होता है इसमें?

दादाश्री : ये लोग देखते ही हैं न सभी। पूरी दुनिया देखती है और जानती है न! इनसे कहें कि आप देखते-जानते नहीं हो, तो कहेंगे 'अभी क्या कर रहे हैं हम?' पूरा फोर्ट एरिया देखा, फलाना देखा, फलाना देखा। लेकिन उस देखने वाले को भी जानना है। और इस देखने वाले को भी जानने वाला है!

प्रश्नकर्ता : इस देखने वाले को जानना है?

दादाश्री : इस देखने वाले को जो देखता है और जानने वाले को जो जानता है, वह मूल आत्मा है।

प्रश्नकर्ता : उसे आपने प्रज्ञा कहा अभी।

दादाश्री : हाँ, प्रज्ञा।

प्रश्नकर्ता : तो फिर उससे आगे मूल आत्मा का फंक्शन क्या रहा?

दादाश्री : नहीं। उससे आगे कुछ नहीं है। बस, वहाँ एन्ड। किसी को किसी से लेना-देना नहीं है, कोई किसी की हेल्प नहीं करता, किसी को कुछ भी छोड़ना नहीं है, ऐसे हैं ये तत्व! टंकोत्कीर्ण स्वभाव वाले। कभी भी एकाकार नहीं हुए हैं, अलग के अलग ही रहे हैं। जैसे तेल और पानी दोनों इकट्ठे हो गए हों लेकिन उसमें दोनों अलग के अलग ही रहते हैं।

पूर्णता पाने के लिए पालन करें पाँच आज्ञाएँ

प्रश्नकर्ता : हम जो कुछ भी देखते हैं और जानते हैं, वह एक बात है और दूसरी तरफ हमें ज्ञाता-द्रष्टा होना है, वह दूसरी बात है। यह देखने-जानने वाला और वह देखने-जानने वाला दोनों अलग चीज़ें हैं?

दादाश्री : हाँ, सही है।

प्रश्नकर्ता : तो इस देखने-जानने वाले में से उस देखने-जानने वाले में किस तरह ट्रान्सफर होता है?

दादाश्री : यह देखने-जानने वाला जो है

न, उसकी सभी क्रियाओं को जो जानता है, वह यह ज्ञाता-द्रष्टा है।

प्रश्नकर्ता : अत: संक्षेप में अभी यह जो अहंकार है वह देखने-जानने वाला है और अहंकार की क्रिया को जाने...

दादाश्री : 'मैं' (अहंकार) क्या कर रहा है, मन क्या कर रहा है, बुद्धि क्या कर रही है!

प्रश्नकर्ता : ठीक है। यह बात सही है आपकी। लेकिन अभी भी हमें इसका अनुभव तो होता है कि ऐसा हो रहा है। जिसे आपने ज्ञेय बनाया है। अब ये मन-वचन-काया और अहंकार, लेकिन वास्तव में तो आप ऐसा कहते हैं न कि अभी भी मूल आत्मा देखता-जानता नहीं है। आत्मा तो बहुत दूर है उससे।

दादाश्री : यह उसका (मूल आत्मा का) विषय नहीं है। यह तो, जो इस इन्द्रिय दृष्टि से दिखाई देता है, यह उसका विषय नहीं है।

प्रश्नकर्ता : देखने-जानने की शक्ति क्या मूल आत्मा की ही है?

दादाश्री : हाँ। लेकिन अभी बीच में प्रज्ञा का मीडियम है।

प्रश्नकर्ता : अभी मीडियम थ्रू जानता है लेकिन जानता वही (मूल आत्मा) है क्या?

दादाश्री : और कौन जानेगा फिर? लेकिन वह इस प्रज्ञा के मीडियम थ्रू जानता है।

प्रश्नकर्ता : तो क्या उस तक खबर पहुँचती ही नहीं?

दादाश्री : मूल आत्मा को कोई लेना-देना ही नहीं है! वह तो वीतराग है। और यह क्या हो रहा है वह सब, यह जो मीडियम खड़ा हुआ है, वह प्रज्ञाशक्ति जानती है।

प्रश्नकर्ता : तो वह जो ज्ञाता है, उस पर इस ज्ञेय का कोई भी असर नहीं होता?

दादाश्री : हो ही नहीं सकता। उस पर कोई संग का असर नहीं हो सकता। उस पर कोई भी चीज़ का असर नहीं हो सकता। भावों से निर्लेप, संग से असंग!

प्रश्नकर्ता : सिर्फ देखना और जानना ही उसका खुद का स्वधर्म है?

दादाश्री : ज्ञाता-द्रष्टा ही स्वभाव है। यहाँ पर लाइट जल रही हो न, वह बस, देखती है। उस लाइट में यदि जीव होता तो वह देखता रहता।

प्रश्नकर्ता : आत्मा का उपयोग होता होगा?

दादाश्री : न हो ऐसा कहीं होता होगा? वे जो विचार आते हैं उन्हें आप जान जाते हो, अंदर गुस्सा आता है, उसे आप जान जाते हो न?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : हं। ऐसा फिर मूल अंत तक नहीं पहुँचता, वह प्रज्ञा तक पहुँचता है क्योंकि यह बीच का (मध्यवर्ती) ज्ञान है, वह आत्मा तो सिर्फ ज्ञाता-द्रष्टा है!

प्रश्नकर्ता : हाँ, अंत तक नहीं पहुँचता, बात तो वही है न? मेरा वही पोइन्ट है कि उस तक अंत तक पहुँचेगा कैसे?

दादाश्री : इस प्रकार प्रज्ञा में आने के बाद ही मूल तक पहुँचता है।

प्रश्नकर्ता : उसका कौन सा साधन है?

दादाश्री : पाँच आज्ञाएँ ही सब से बड़ा साधन है। पहले इन्द्रिय ज्ञान से दिखाई देता है। फिर बुद्धि ज्ञान से दिखाई देता है और फिर वह प्रज्ञा से दिखाई देता है और बाद में आत्मा से।

प्रश्नकर्ता : लेकिन यह मूल आत्मा, जो ज्ञाता है, उसका, ज्ञाता का ज्ञेयों के साथ का कैसा संबंध है?

दादाश्री : ज्ञान फिर ज्ञेय को देखता है, इसलिए ज्ञानाकार हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन यह जो ज्ञाता है, मूल आत्मा, वह तो कभी ज्ञेयाकार होता ही नहीं न?

दादाश्री : उसे कुछ भी लेना-देना नहीं है। अंत तक यह प्रज्ञा है और जब केवलज्ञान होता है तब फिर एक, प्रज्ञा भी एक हो जाती है।

प्रश्नकर्ता : अत: आत्मा तो, जब केवलज्ञान होता है तभी काम में आता है, तब तक नहीं?

दादाश्री : नहीं! तब तक मूल ज्ञाता-द्रष्टा नहीं हो सकता। हमें ज़रूरत भी नहीं है। वह केवलज्ञान तो अपने आप ही आता है। उसे माँगने भी नहीं जाना पड़ता। जैसे बड़ौदा की गाड़ी में टिकट-विकट लेकर बैठने के बाद बड़ौदा स्टेशन अपने आप ही आ जाता है, वैसे। आपको तो सिर्फ गाड़ी में बैठने की ज़रूरत है। बैठ गए और इस आज्ञा का पालन करना है कि भाई, किसी स्टेशन पर उतर मत जाना। किसी जगह अच्छी चाय-पानी मिले तो वहाँ उतर मत जाना। आपको ये भाई कहें तो भी कहना, 'यहाँ नहीं उतरना है। चलो, वापस बैठ जाओ!' जब ये कहे कि, 'आओ, वह कैन्टीन अच्छी है।' तब भी आपको 'ना' कहना है।

प्रश्नकर्ता : पाँच आज्ञाओं का पालन पूरी तरह से करने के बावजूद अगर कैन्टीन में जाए तो?

दादाश्री : तो हर्ज नहीं है। जो पाँच आज्ञाओं का पालन कर रहा हो तो वह कहीं भी जाए, उसे बंधन नहीं है। लेकिन जो पाँच आज्ञाओं का पालन कर रहा हो, वह किसी (रिलेटिव) स्टेशन पर उतरेगा ही नहीं न!

आज्ञा समझ ली, वह समझ गया सब

प्रश्नकर्ता : इन पाँच आज्ञाओं में रहना है, ऐसा जो भाव करे और आज्ञाओं को ठीक से समझ ले, तो इन दोनों में से किसका फल जल्दी मिलता है?

दादाश्री : आज्ञा समझ ले न, उस जैसा तो और कुछ भी नहीं है! समझने के बाद अपने आप सहज रूप से पालन होगा। और बिना समझे आज्ञा पालन करने जाएगा तो कुछ बरकत नहीं आएगी। फिर भी महात्मा कुछ न कुछ तो करेंगे, इसके पीछे पड़े हैं न!

प्रश्नकर्ता : यानी अब सिर्फ आज्ञा को एक्ज़ेक्ट समझना है और जो आत्मा पूर्ण स्वरूप से है उसे भी एक्ज़ेक्ट समझना है।

दादाश्री : आत्मा तो मैंने दे ही दिया है। इन आज्ञाओं को समझ जाए तो उसने पूरा आत्मा समझा हुआ ही है। इसलिए अब, आज्ञा ही धर्म और आज्ञा ही तप। लेकिन वह तो, आपको फुरसत मिलती ही नहीं न, कभी भी?

प्रश्नकर्ता : आज्ञा ऐसी चीज़ है कि उसमें टाइम फैक्टर की ज़रूरत ही नहीं है।

दादाश्री : हाँ, उसमें टाइम फैक्टर है ही नहीं न!

प्रश्नकर्ता : जहाँ से अनुसंधान टूटा हो तो वापस वहीं से जोड़कर आज्ञा पालन जारी रख सकते हैं।

दादाश्री : हाँ, जोड़ सकते हैं।

प्रश्नकर्ता : दादा का जो साइन्स है, पहले उसे समझ लेंगे तो पाँच आज्ञाओं में रह पाएँगे

या पाँच आज्ञा समझने पर दादा के विज्ञान की शुरुआत होती है?

दादाश्री : पहले विज्ञान को सुने और समझ ले, उसके बाद उसका रक्षण करने के लिए पाँच आज्ञाएँ हैं। यह विज्ञान खो न जाए, उसके लिए पाँच आज्ञा है।

प्रश्नकर्ता : अब, ये जो मन-बुद्धि-चित्त हैं, उन्हें हम कब समझ सकेंगे? जब संपूर्ण रूप से पाँच आज्ञाओं में रहता हो तब फिर उन पर उपयोग रह सकेगा न?

दादाश्री : ऐसा उपयोग नहीं रहे तो कोई हर्ज नहीं। मन व बुद्धि की हमें ज़रूरत नहीं है। पाँच आज्ञा में रहेगा न, तो फायदे में रहेगा। पाँच आज्ञा का पालन करे तो बहुत हो गया। मन-बुद्धि की कोई ज़रूरत ही नहीं है न?

प्रश्नकर्ता : कई बार ऐसा लगता है कि पहले दादा का विज्ञान समझ लें, फिर आज्ञा का 'ऑटोमैटिक' पालन हो सकेगा, ऐसा है!

दादाश्री : पालन करना चाहे तो पालन हो सकेगा। वह खुद माने, यदि निश्चय होगा तो पालन हो सकेगा। विज्ञान को पूरा समझ लेगा, तो आज्ञा पालन करने की शक्ति उत्पन्न होगी।

प्रज्ञा की उपस्थिति में आज्ञा का पालन करें

दादाश्री : क्या तू आज्ञा के बाहर चलता है?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : चलता कौन है और पता किसे चलता है?

प्रश्नकर्ता : चलता है लट्टू और पता चलता है प्रज्ञाशक्ति को। लेकिन ज्ञान मिलने के बाद जो प्रज्ञाशक्ति खड़ी हुई है, वह क्या आज्ञा का पालन करने के लिए सचेत नहीं करती?

दादाश्री : प्रज्ञाशक्ति हर कोने में सचेत करती है। लेकिन अंत:करण उसकी नहीं सुनता इसलिए फिर से आवरण आ जाता है।

प्रश्नकर्ता : कौन नहीं सुनता?

दादाश्री : पूरा अंत:करण! मन-बुद्धि-चित्त-अहंकार, पूरा अंत:करण! इतना अच्छा ज्ञान मिला है, फिर भी लाभ न उठाए, तो फिर व्यर्थ ही हुआ न! इन पाँच वाक्यों में (आज्ञा में) एडजस्ट नहीं हो पाता हो, तो समझ जाना चाहिए कि टेढ़ी बुद्धि काम कर रही है। इन पाँच ही वाक्यों में रहने जैसा है। बाकी सब कुछ मिटा देने जैसा है, फिर भी कुरेदते रहते हैं। हमारी दी हुई आज्ञा का उपयोग करे तो उसे किसी भी जगह परेशानी नहीं होगी।

प्रश्नकर्ता : प्रज्ञाशक्ति का इतना विकास हो जाता है कि सभी आज्ञाएँ सहज रूप से पालन हो जाती हैं?

दादाश्री : पालन हो जाती हैं। प्रज्ञाशक्ति पकड़ ही लेती है। यह प्रज्ञा है इसीलिए तो हम कहते हैं कि यह आज्ञा का पालन करे तब प्रज्ञा होती है। प्रज्ञा तो है, लेकिन आज्ञा का पालन नहीं करते, वर्ना जो आज्ञा का पालन करता है न, वह तो मुक्त पुरुष ही कहलाएगा। संसार में रहने के बावजूद संपूर्ण रूप से मुक्त! निरंतर जागृति रहती है, एक क्षण के लिए भी जागृति डगमगाती नहीं है।

हमारे पाँच वाक्यों में सब आ जाता है। पूरे वर्ल्ड का साइन्स आ जाता है। इन पाँच आज्ञाओं में इतना अधिक बल है कि भगवान के, तीर्थंकरों के पैंतालीस आगम, इन पाँच आज्ञाओं में आ गए हैं।

जय सच्चिदानंद

ऋणानुबंध से कैसे छूटें?

प्रश्नकर्ता : पूर्व जन्म के ऋणानुबंध से छूटने के लिए क्या करना चाहिए?

दादाश्री : हमें जिसके साथ पूर्व का ऋणानुबंध हो और वह हमें पसंद ही ना हो, उसके साथ रहना ही पसंद ना हो और फिर भी अनिवार्य रूप से सहवास में रहना पड़ता हो, तो क्या करना चाहिए? बाहर का व्यवहार उसके साथ रखना चाहिए, लेकिन अंदर उसके नाम के प्रतिक्रमण करने चाहिए। क्योंकि हमने पिछले जन्म में अतिक्रमण किया था, यह उसका परिणाम है। कॉज़ेज़ क्या किए थे? तो उसके साथ पूर्व जन्म में अतिक्रमण किया था। उस अतिक्रमण का इस जन्म में फल आया। यानी उसका प्रतिक्रमण करेंगे तो प्लस-माइनस (जोड़ना-घटाना) हो जाएगा। अतः अंदर आप उसके लिए माफी माँग लो। माफी माँगते रहो कि 'मैंने जो-जो दोष किए हैं, उसके लिए माफी माँगता हूँ'। किसी भी भगवान की साक्षी में माफी माँग लो, तो सब खत्म हो जाएगा।

सहवास पसंद न हो तो फिर क्या होता है? कि उसको बहुत दोषित देखने से, किसी पुरुष को स्त्री पसंद ना हो तो वह उसे दोषित ही देखता रहता है, इससे तिरस्कार होता है इसलिए भय लगता है। हमें जिसके प्रति तिरस्कार हो न, उसका हमें भय लगता है। उसे देखते ही घबराहट होती है, यानी जानना है कि 'यह तिरस्कार है'। अतः तिरस्कार छोड़ने के लिए माफी माँगते रहो,दो ही दिन में वह तिरस्कार बंद हो जाएगा। वह नहीं जानता लेकिन आप अंदर माफी माँगते रहो, जिसके प्रति जो-जो दोष किए हों, उसके नाम की, कि 'हे भगवान! मैं क्षमा माँगता हूँ', यह दोषों का परिणाम है। आपने किसी भी व्यक्ति के प्रति जो-जो दोष किए हों, उसके लिए उसके भीतर बैठे भगवान से आप माफी माँगते रहो, तो सब धुल जाता है।

यह (रिलेटिव संबंध) तो नाटक है। नाटक में पत्नी-बच्चों को हमेशा के लिए खुद के बना दे तो क्या चलेगा? हाँ, जैसे नाटक में बोलते हैं, वैसा बोलने में हर्ज नहीं है कि 'यह मेरा बड़ा बेटा, शतायु', लेकिन सब ऊपरी, नाटकीय। इन सब को सही माना, उसके ही प्रतिक्रमण करने पड़ते हैं। यदि सही नहीं माना होता तो प्रतिक्रमण करने ही नहीं पड़ते। जहाँ सत्य माना गया, वहाँ राग और द्वेष शुरू हो जाते हैं और प्रतिक्रमण से ही मोक्ष है। ये 'दादा' दिखाते हैं, उस आलोचना-प्रतिक्रमण-प्रत्याख्यान से मोक्ष है।

प्रश्नकर्ता : कभी कभार तो मन दु:खी हो जाता है कि उन्होंने भी ज्ञान लिया है, हमने भी ज्ञान लिया है, तो ऐसा क्यों होता है?

दादाश्री : ये तो सब कर्म के उदय हैं, उसमें हमें प्रतिक्रमण करना है, ये तो कर्म के उदय हैं। धक्का लगे बगैर रहता नहीं। उनकी इच्छा ऐसी नहीं होती, फिर भी सब कर्म के धक्के लगते रहते हैं। कर्म तो भुगतने ही पड़ेंगे न!

(परम पूज्य दादाश्री की ज्ञानवाणी में से संकलित)

त्रिमंदिरो के संपर्क : अडालज : 9328661166-77, **राजकोट :** 9924343478, **भूज :** 9924345588, **मुंबई :** 9323528901, **अंजार :** 9924346622, **मोरबी :** 9924341188, **सुरेन्द्रनगर :** 9737048322, **अमरेली :** 9924344460, **वडोदरा :** 9574001557, **गोधरा :** 9723707738, **जामनगर :** 9924343687, **भावनगर :** 9313882288, **अहमदाबाद (दादा दर्शन) :** 9574001445, **वडोदरा (दादा मंदिर) :** 9924343335, **दिल्ली :** 9810098564, **बैंगलूर :** 9590979099, **कोलकता :** 9830080820 **यु.एस.ए.-केनेडा:** +1 877-505-3232, **यु.के.:** +44 330-111-3232, **ऑस्ट्रेलिया:** +61 402179706

Atmagnani Pujya Deepakbhai's Australia-New Zealand-Hong Kong Satsang Schedule - 2026					
Date	**Day**	**Session**	**From**	**To**	**Venue & Contact No.**
			PERTH - AUSTRALIA		
18 Sep	Fri	Aptaputra Satsang	7:30 PM	9:30 PM	**Shree Jalaram Sanatan Mandir & Community Centre**, 4 Accomplish Way, Gnangara WA 6077, **Australia** +61 425255677 +61 416330471
19 Sep	Sat	Satsang	7:30 PM	9:30 PM	**Vasto Club** 5 Vasto Place, Balcatta, **Perth**, WA 6021, **Australia** +61 425255677 +61 404596584
20 Sep	Sun	Aptaputra Satsang	11:00 AM	12:30 PM	
		Gnanvidhi	4:00 PM	8:00 PM	
21 Sep	Mon	Satsang	7:30 PM	9:30 PM	
			SYDNEY - AUSTRALIA		
25 Sep	Fri	Aptaputra Satsang	11:00 AM	12:30 PM	**Centre for Oneness Sydney (Nirankari Bhawan)** 166 Glendenning Road Glendenning NSW 2761, **Australia** +61 435574407 +61 402179706
		Satsang	7:30 PM	9:30 PM	
26 Sep	Sat	Aptaputra Satsang	11:00 AM	12:30 PM	
		Gnanvidhi	4:00 PM	8:30 PM	
27 Sep	Sun	Satsang	5:00 PM	7:00 PM	
28 Sep 1 Oct	Mon Thu	**All Day**	**Sydney Shibir**		Prior Registration Required
			AUCKLAND - NEW ZEALAND		
3 Oct	Sat	Satsang	7:00 PM	9:00 PM	**Shri Shirdi Sai Baba Sansthan** 12-18 Princess Street, Onehunga Auckland - 4118, **New Zealand** +64 222323269
4 Oct	Sun	Aptaputra Satsang	11:00 AM	12:30 PM	
		Gnanvidhi	4:00 PM	8:00 PM	
5 Oct	Mon	Satsang	7:00 PM	9:00 PM	
			HONG KONG		
9 Oct	Fri	Satsang	8:30 PM	10:00 PM	**BAPS Swaminarayan Mandir** 10th Floor, Unit F, Kaiser Estate, Phase 1, 41, Man Yue Street, Hung Hom, Hong Kong +852 51953530
10 Oct	Sat	Aptaputra Satsang	11:00 PM	12:30 PM	
		Satsang	8:30 PM	10:00 PM	
11 Oct	Sun	**Gnanvidhi**	4:30 PM	8:00 PM	

आत्मज्ञानी पूज्य दीपकभाई के सानिध्य में सत्संग कार्यक्रम

अडालज

8 नवम्बर (रवि) – रात 8-30 से 10-30 **दिपावली के अवसर पर विशेष भक्ति**

10 नवम्बर (मंगल) – **नूतन वर्ष (वि. सं. 2083) के अवसर पर विशेष कार्यक्रम**

15 नवम्बर (रवि) – शाम 4-30 से 8 – **ज्ञानविधि**

आणंद में परम पूज्य दादा भगवान का 119वाँ जन्मजयंती महोत्सव

19 से 23 नवम्बर – सत्संग, 22 नवम्बर – ज्ञानविधि, 23 नवम्बर – जन्मजयंती दिवस,

सूचना : रजिस्ट्रेशन करवाना आवश्यक है। रजिस्ट्रेशन की अधिक जानकारी **Akonnect** ऐप पर उपलब्ध है.

जैक्सनविले : गुरुपूर्णिमा महोत्सव : ता. 28 जुलाई से 2 अगस्त 2026

डलास : सत्संग-ज्ञानविधि : ता. 6-7 अगस्त 2026

सितम्बर 2026
वर्ष-21 अंक-11
अखंड क्रमांक - 251

दादावाणी

Date Of Publication On 15th Of Every Month
RNI No. GUJHIN/2005/17258
Reg. No. G-GNR-348/2024-2026
Valid up to 31-12-2026
Licensed to Post Without Pre-payment
No. PMG/NG/036/2024-2026
Valid up to 31-12-2026
Posted at Adalaj Post Office
on 15th of every month.

प्रज्ञा, वह क्या है?

आत्मा से जो पराया है, उसे कभी भी अपना नहीं होने देती और जो खुद का है, उसे कभी भी पराया नहीं मानने देती, वह प्रज्ञा! प्रज्ञा, वह तो आत्मा का ही अंग है और वह निरंतर आत्मा को मुक्ति दिलाने का ही कार्य करती है। जैसे-जैसे प्रज्ञा खिलती जाती है, वैसे-वैसे वर्तन में बदलाव आता जाता है। वर्तन बदलता है इसलिए बोझ कम लगता है। 'खुद का' और 'पराया', इस प्रकार होम डिपार्टमेन्ट और फॉरेन डिपार्टमेन्ट दोनों को अलग ही रखती है, वह प्रज्ञा है, वही आत्मा है, वही चारित्र है। वर्तन वही चारित्र। वर्तन अर्थात् 'स्व' और 'पर' को एकाकार नहीं होने दे, वह। हम ज्ञान देते हैं, तब सीधे ही अनुभूति हो जाती है, उसे परमार्थ समकित कहते हैं। इससे प्रज्ञा भाव उसी समय आपको उत्पन्न हो जाता है।

- दादाश्री

DBF - Adalaj

Printed and Published by Dimple Mehta on behalf of Mahavideh Foundation - Owner. Printed at Amba Multiprint, Opp. H B Kapadiya New High School, Chhatral - Pratappura Road, At - Chhatral, Tal : Kalol, Dist. Gandhinagar - 382729.